डॉ. हणमंतराव पाटील

अनुवाद का स्वरूप एवं महत्व

अनुवाद आधुनिक युग की अनिवार्य आवश्यकता है। भारत में अनेक भाषाएँ तथा बोलियाँ बोली जाती हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद भारतीय एकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। अनुवाद का अर्थ – पुनःकथन है। अनुवाद शब्द 'वद्' धातु से निर्मित है – जिसका अर्थ है कहना और 'वाद' के साथ 'अनु' उपसर्ग लगता है तो शब्द बनता है 'अनुवाद'। अनुवाद का सरल अर्थ हुआ किसी के कहने के बाद कहना अर्थात् पुनःकथन।

हिंदी में 'अनुवाद' शब्द संस्कृत से आया है। कुछ विद्वान् आधुनिक अर्थ में 'अनुवाद' शब्द अंग्रेजी शब्द Translation का रूपांतरण मानते हैं जिसका अर्थ है 'पार ले जाना'। अनुवाद के संदर्भ में एक भाषा के कथ्य को दूसरी भाषा में 'पार ले जाना' होता है।

अनुवाद एक भाषा में किसी के द्वारा कथित बात का दूसरी भाषा में पुनःकथन ही है। अनेक विद्वानों ने उसे अपनी-अपनी दृष्टि से 'अनुवाद' को परिभाषित किया है। सेम्युअल जॉनसन के अनुसार, ''मूल के भावों की रक्षा करते हुए उसे दूसरी भाषा में बदलना अनुवाद है।'' डॉ. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर अनुवाद प्रक्रिया में लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के तत्वों को घुल-मिल जाने में मानते हैं। डॉ. सतीश रोहरा अनुवाद को ऑप्रेशन मानते हैं जिसमें एक भाषा की दूसरी भाषा में पाठ्य-सामग्री प्रतिस्थापित की जाती है। उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अनुवाद में दो भाषाओं की अनिवार्यता है। अनूदित पाठ मूल का सहपाठ हो जाता है। इसीलिए एलेंक्जेंडर पोप अनुवाद में मूल चेतना को महत्व देते हैं। एलेक्जेंडर फ्रेजर अनुवाद में मूल का संपूर्ण भाव, मूल की शैली, मूल की सहजता को प्रमुख मानते हैं।

निश्चित रूप से उपर्युक्त विद्वानों का अनुवाद चिंतन गहन है। इन परिभाषाओं के आधार पर अनुवाद को इन शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है कि ''एक भाषा में व्यक्त भावों या विचारों को दूसरी भाषा में समतुल्यता के आधार पर सहज रूप में

अभिव्यक्त करना अनुवाद है।''

एक भाषा में कही गई बात, कथ्य और शैली दोनों स्तरों पर दूसरी भाषा में शत-प्रतिशत उतारना असंभव नहीं तो अत्यंत कठिन अवश्य है। अनुवाद करते समय कथन और कथ्य में सूक्ष्म अंतर आ ही जाता है। इस स्थिति में समतुल्यता को बनाए रखना अनुवादक के लिए चुनौतीपूर्ण होता है। जब स्रोत भाषा के रचयिता के विचार, उद्देश्य एवं अनुभूति लक्ष्य भाषा के पाठक ज्यों की त्यों अनुभव करें, तो वह सफल अनुवाद होता है। अर्थ और कथन का रूपांतरण जितना सरल लगता है, उतना है नहीं। कारण अनुवाद प्रक्रिया में दो भाषाएँ जुड़ी हुई होती हैं और हर भाषा की अपनी प्रकृति एवं प्रवृत्तियाँ होती हैं। फिर वह ध्वन्यात्मक, रूपात्मक, शब्दात्मक, पदात्मक हो या फिर सांस्कृतिक या सामाजिक हो इन – सबका स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अंतरण होना असंभव है। अनुवाद निर्धारण के लिए समतुल्यता की दृष्टि से अर्थ एवं शैली आवश्यक है, परंतु बाधक भी है। समतुल्य की बात इतनी सरल नहीं है। जैसे 'अक्षत' शब्द पवित्रता एवं मांगल्य का प्रतीक है जिसका अंग्रेजी में अनुवाद Rice होता है। यह शब्दानुवाद है, परंतु भावानुवाद नहीं। समतुल्यता के कारण 'अक्षत' का मांगल्य Rice शब्द में नहीं आ पाया। कभी-कभी तो मूल पाठ के लक्ष्य भाषा में प्रतिशब्द भी नहीं मिलते। जैसे, 'माँग भरना'। ऐसी स्थिति में सांकेतिक या निकटतम शब्दों में बात स्पष्ट करनी पड़ती है। काव्यानुवाद में समतुल्य की अभिव्यक्ति बाधा उत्पन्न करती है। कवि की प्रतिभा अनुवाद में उतारना कठिन है। कभी-कभी अर्थ-संकोच या अर्थ-विस्तार भी हो जाता है। प्रत्येक शब्द का अर्थ परिस्थिति एवं प्रसंग के आधार पर ध्वनित होता है। जैसे, अमेरिकी अंग्रेजी में 'Corn' शब्द 'मक्का' के लिए प्रयुक्त होता है और ब्रिटिश या भारतीय अंग्रेजी में 'अनाज' का अर्थ देता है।

शब्दानुवाद में स्रोत भाषा को लक्ष्य भाषा के व्याकरणिक रूप में रखना महत्वपूर्ण है। पारिभाषिक शब्दावली, विधि एवं शैक्षणिक क्षेत्र में शाब्दिक अनुवाद का विशेष महत्व है। इसमें उचित शब्द भंडार संग्रह अनिवार्य है। अन्यथा स्रोत भाषा के शब्दों को थोड़े हेर-फेर के साथ स्वीकार करना पड़ता है। स्रोत भाषा के शब्दों को सही ढंग से लक्ष्य भाषा में अवतरित कर देना चाहिए। जैसे, Blind Galley का अनुवाद 'अंधी गली' नहीं 'बंद गली' किया जाना चाहिए। इसी प्रकार, Two Meals a day का अनुवाद 'एक दिन में दो भोजन' न करके 'दो वक्त का खाना' किया जाता है। अनुवाद परंपरा में कुछ शब्दों के अनुवाद निश्चित हैं – जैसे, Engine का अनुवाद 'धुआँकस' न होकर लिप्यंतरित रूप – इंजन – ही निश्चित हो गया है। शाब्दिक अनुवाद प्रक्रिया में कुछ शब्द अंग्रेजी से हिंदी में और हिंदी से अंग्रेजी में आ गए हैं। जैसे – पत्तल Dining Leaf, गोधूली Cowdust Hour आदि।

भावानुवाद में भाव प्रधान होते हैं। संसार के समस्त प्राणियों की तरह मनुष्य भी भावों द्वारा अपने आपको व्यक्त करता है। शब्द उसके भावों के वाहक होते हैं। भावानुवाद में शब्दों से अधिक भावों का महत्व होता है। यहाँ अनुवादक अपनी मौलिकता का उपयोग करता है। अनुवाद का यही स्वरूप उपयुक्त है कि वह मूल से हटना नहीं चाहिए। उदाहरण Gold शब्द का अर्थ है सोना और Golden शब्द का अर्थ है सुनहरा। पर अनुवाद में – Golden Jublee – स्वर्ण जयंती, Golden Chance – सुनहरा अवसर, Golden Sucess – शानदार सफलता।

हिंदी में कई उदाहरण हैं जिनका सटीक भावानुवाद अपेक्षित है, नहीं तो अर्थ गलत हो जाता है। जैसे –

मूल शब्द	**शब्दानुवाद**	**भावानुवाद**
Hunger Strike	भूख हड़ताल	अनशन
White ant	सफेद चींटी	दीमक

उचित भावानुवाद पाठकों के सहृदय एवं मस्तिष्क को गहराई से प्रभावित कर सकता है। काव्यानुवाद में अधिकतम निकट अनुवाद ही संभव है।

अर्थ, शब्द और ध्वनि का योग कविता है। लक्ष्य भाषा में उसे अवतरित करना बहुत कठिन है। उदाहरण के तौर पर हिंदी का 'अर्धांगिनी' शब्द लिया जा सकता है जिसमें 'पत्नी' अर्थ के साथ एक श्रद्धा भाव भी है। इसके लिए अंग्रेजी में 'Better half' शब्द का प्रयोग किया जाता है। वस्तुतः 'अर्धांगिनी' में जो श्रद्धाभाव है वह 'Better half' में नहीं है। कहने का तात्पर्य है कि, प्रत्येक शब्द अर्थवत्ता के स्तर पर अपने सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ होता है, जिसका शाब्दिक अनुवाद संभव है पर सामाजिक-सांस्कृतिक बातों का अनुवाद एक प्रश्न चिह्न है। वैसे यह भी सच है कि छंदबद्धता का पालन किए बिना भी श्रेष्ठ कोटि का अनुवाद किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, रवींद्रनाथ टैगोर की 'गीतांजलि' का अंग्रेजी अनुवाद गद्य में है लेकिन ध्यान रहे कि इसी गद्य अनुवाद ने उन्हें नोबल पुरस्कार दिलाया है। दूसरा उदाहरण 'कनक कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाय' में एक कनक 'सोना' है तो दूसरा 'कनक' 'धतूरा' है। लक्ष्य भाषा में 'सोना' और 'धतूरा' दोनों अर्थ रखने वाला कोई एक शब्द मिलना कठिन है। उसी प्रकार जब यह कहा जाता है कि 'वह उल्लू है' तो इसमें मूर्खता का भाव का बोध होता है पर उसका अंग्रेजी अनुवाद Owl करें तो बात बिगड़ जाएगी। कारण इंग्लैंड में 'उल्लू' मूर्खता का प्रतीक न होकर 'अक्लमंदी' का प्रतीक है।

नाट्यानुवाद में रंगमंचीय दृष्टि से नाटक का अनुवाद सक्षम होना चाहिए। संवाद

नाटक के प्राण होते हैं। उनका अनुवाद करते समय लक्ष्य भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखना चाहिए। जैसे – 'तुम्हारी मातृभाषा कौन-सी है?' जिसका जवाब 'मेरी मातृभाषा मराठी है।' पर यहाँ केवल 'मराठी' शब्द का उच्चारण करने से भी काम बन सकता है।

इसी प्रकार लोकोक्तियाँ और मुहावरों का अनुवाद करते समय भी शब्द और अर्थ की दृष्टि से समान लोकोक्तियों-मुहावरों का मिलना कठिन है। जैसे – गधे को जाफरन की क्या कद्र? (हिंदी) गाढ़वाला गुळाची चव काय? (मराठी) यहाँ पर शब्द और अर्थ में समानता है। केवल 'जाफरन' की जगह 'गुड़' शब्द आया है। समान शब्द और अर्थ की पूर्ण समानता न मिले तो कम से कम समान भाव का प्रयोग किया जाना चाहिए। मराठी में 'पायला मुंग्या येणे' का अर्थ है 'पैरों में झुनझुनी होना'। इसके लिए एक मुहावरा प्रचलित है – 'पाय जड होणे' परंतु इसका शब्दशः हिंदी अनुवाद 'पैर भारी होना' सीधे गर्भवती होने का संकेत देता है। यहाँ मराठी मुहावरे का हिंदी अनुवाद मराठी अर्थ से कोसों दूर है। अर्थात् अनुवाद करते समय इस भयंकरता से अनुवादक को बचना चाहिए। इसी प्रकार 'जिस पत्तल में खाया उसी में छेद करना' जैसे मुहावरे का अंग्रेजी पर्याय नहीं है। पत्तल का 'डाईनिंग लीफ' अनुवाद ठीक नहीं है। अनुवाद प्रक्रिया में इससे बचना चाहिए।

विज्ञापन के अनुवाद में भावानुवाद या शब्दानुवाद से परे मिश्रित भाषा का प्रयोग किया जाता है। कई बार लक्ष्य भाषा की प्रकृति देखकर अनुवाद का रूप निर्माण किया जाता है। जैसे – 'थम्स अप' का अंग्रेजी विज्ञापन 'टेस्ट दि थंडर' है। इसका अनुवाद कठिन है। कारण इसमें संगीतात्मकता है। इसलिए इसका अनुवाद 'तूफानी ठंडा' किया गया है। इसमें मूल और अनुवाद का थोड़ा भी साम्य नहीं, पर लय और भाव के कारण अनुवाद सफल बन गया।

शीर्षक के अनुवाद में भी प्रभाव को सर्वाधिक महत्व देना चाहिए। शीर्षक में यथावत् अनुवाद अर्थ भिन्नता पैदा कर सकता है। डॉ. भोलानाथ तिवारी उदाहरण देते हैं – Around the World का यथावत् अनुवाद 'दुनिया के आसपास' होगा, जो सही प्रतीत नहीं होता। इसके स्थान पर 'दुनिया की सैर' बिलकुल सही प्रतीत होता है। इसी प्रकार मौलाना आजाद की पुस्तक है – Indian wins freedom जिसका हिंदी अनुवाद 'स्वतंत्रता की कथा' सही होगा परंतु उनकी लेखन प्रकृति उर्दूनिष्ठ है। अतः इसका उर्दूनिष्ठ अनुवाद 'आजादी की कहानी' सही होगा।

बिंबों के अनुवाद में सतर्कता बरतनी चाहिए। जैसे – If winter comes, can spring be far behind का शब्दानुवाद से काम नहीं चलेगा। कारण इस पंक्ति का शब्दानुवाद इस प्रकार होगा – ''जब ठंड का मौसम आता है तो क्या वसंत का मौसम नहीं आएगा?'' लेकिन यहाँ अभिधार्थ के स्थान पर ध्वन्यार्थ बिंब प्रभावित बनेगा। जैसे – 'दुःख आता

है तो सुख भी आएगा।'

मिथकों में संदर्भ तथा संबंधित कथा का महत्व स्वयंसिद्ध होता है। मिथकों के अनुवाद में भी एक विशेष ध्यान में रखना पड़ता है। कारण मिथकों का अनुवाद लक्ष्य भाषा के प्रतिकूल सिद्ध होता है।

अनुवाद अपने आप में कला भी है और शिल्प भी है। अनुवाद के द्वारा हम दूसरे के साहित्य के साथ-साथ उनकी प्रशासनिक, शैक्षणिक, वैज्ञानिक, धार्मिक जानकारियों आदि के अत्यंत नजदीक आ रहे हैं।

आज के इस भूमंडलीकरण के युग में हम सभी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अनुवाद का सहारा लेते हैं। वैसे तो हम जब भी कोई भाषा बोलते हैं, तब मन ही मन अनुवाद करते हैं और फिर उसको बोलते हैं। इसी तरह जब हम मातृभाषा से इतर भाषा में कुछ भी बोलते हैं तो वह अनुवाद के जरिए ही संभव होता है। यह अनुवाद का मौखिक क्षेत्र है। समाचार-पत्र, व्यापार, कार्यालय, बैंक, न्यायालय में भी अनुवाद की अत्यंत आवश्यकता होती है। हम वैज्ञानिक दृष्टि से संपन्न देशों का ज्ञान, तकनीकी विज्ञान आदि अनुवाद द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। विधि और न्याय के क्षेत्र में भी अनुवाद अनिवार्य है। कोई मुकदमा निचली न्यायालय से उच्च न्यायालय में चला जाता है तो प्रादेशिक भाषा से अंग्रेजी में अनुवाद करना पड़ता है। शिक्षा के अनुवाद अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। आजकल उच्च शिक्षा का माध्यम हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को बनाया जा रहा है। परंतु उच्च शिक्षा से संबंधित ग्रंथ अंग्रेजी में हैं या अन्य विदेशी भाषाओं में। ऐसी स्थिति में अनुवाद ज्ञान-विज्ञान के द्वार तक ही नहीं पहुँचा सकता बल्कि मील का पत्थर भी साबित होता है। विदेशियों को भारतीय संस्कृति की जानकारी अनुवाद द्वारा ही मिल सकती है। इतना ही नहीं, संचार माध्यम यानी समाचार-पत्र, रेडियो, टेलीविजन में भी अनुवाद अनिवार्य है। विदेशी समाचार भारतीय भाषाओं में अनूदित होकर हम तक पहुँचते हैं। टेलीविजन पर प्रसारित लोकप्रिय धारावाहिक हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद करके प्रसारित किए जाते हैं। इसी प्रकार डिस्कवरी चैनल, नैशनल ज्यॉग्रॉफी चैनल द्वारा हमें सूक्ष्म जानकारियाँ अनुवाद द्वारा ही प्राप्त होती हैं। अंतर्राष्ट्रीय सभा-सम्मेलनों आदि में अनुवाद के बिना संवाद पूरा हो ही नहीं सकता। भारतीय संसद में तो मौखिक अनुवाद होता ही है। इसके साथ ही संसद में प्रस्तुत दस्तावेज पहले अंग्रेजी में तैयार किए जाते हैं और फिर संसद में नियमानुसार हिंदी में ही प्रस्तुत किए जाते हैं। शासन-प्रशासन में भी केंद्र और राज्य सरकारों में हिंदी अनुवाद बिना कामकाज पूरा नहीं होता। पर्यटन के क्षेत्र में भी अनुवाद का अपना स्थान है। विदेशी संस्कृतियों के आदान-प्रदान के लिए भी अनुवाद अनिवार्य है। धर्म एवं दर्शन

के क्षेत्र में अनुवाद आवश्यक है। अलग-अलग भाषाओं में लिखे धार्मिक ग्रंथों को अन्य भाषा-भाषियों तक तभी पहुँचाया जा सकता है, जब उनका अनुवाद किया जाए। धर्म-प्रचार में भी अनुवाद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यही स्थिति दार्शनिक साहित्य की भी है। वैसे दर्शन अपने आप में श्रेष्ठ तो है ही, फिर भी अनुवाद के जरिए वह विश्व के कोने-कोने तक पहुँच गया है। नोबेल एवं ज्ञानपीठ आदि पुरस्कर्ताओं की कृतियाँ अनुवाद के माध्यम से ही विश्व तक पहुँच पाती हैं। तुलनात्मक अध्ययन में भी अनुवाद का अपना स्थान है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुवाद अनेक क्षेत्रों में उपयोगी होता है। भूमंडलीकरण के इस युग में यदि ज्ञान की मंदाकिनी का पानी पीना है तो वह अनुवाद की अंजुलि से ही पिया जा सकता है। अनुवाद लोक-हितैषी आयामों का महाजाल है जिसके जरिए हम सात समुद्र पार ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, अत्याधुनिकता – सभी प्रकार के विचारों से अवगत होकर अपने जीवन को संपन्न एवं समृद्ध बना सकते हैं। अनुवाद के जरिए दूर-दूर सीमाओं में बँटी मानव जाति नजदीक आ गई है। भूमंडलीकरण के दौर में तो अनुवाद का रूप-सौंदर्य और निखर आया है। डॉ. जी. गोपीनाथन अनुवाद को 'सांस्कृतिक सेतु' मानते हैं। अनुवाद मानवीय सभ्यता के साथ विकसित एक ऐसी टेकनीक है जिससे मानव मानव बनकर मानवीयता प्राप्त करता है। मानव अपनी छोटी-सी जिंदगी में समयाभाव एवं साधनों की कमी के बावजूद अनुवाद के जरिए विभिन्न भाषा-भाषी समाजों से संवाद कर सकता है। अनुवाद के अभाव में विश्व की सभी सभ्यताएँ 'नदी के द्वीप' बन जाती हैं पर 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना पनपाने का काम अनुवाद ही करता है।

आज अनुवाद वैश्विक पृष्ठभूमि में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसीलिए जीवन-व्यवहार के कमोबेश सभी क्षेत्रों में अनुवादकों की मांग है। वस्तुतः अनुवाद ने रोजगार के अनेक अवसर प्रदान किए हैं।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि आधुनिक बहुभाषी समाज के लिए अनुवाद अत्यंत आवश्यक है। केवल साहित्य की दृष्टि से ही नहीं, विज्ञान, विधि, प्रशासन, बैंकिंग तथा जीवन-व्यवहार के सभी क्षेत्रों में अनुवाद का महत्व बढ़ता जा रहा है। आधुनिक शिक्षा और परिवेश ने प्रत्येक व्यक्ति को बहुभाषी बना दिया है, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को जाने-अनजाने अनुवादक बनना पड़ रहा है। वस्तुतः अनुवाद का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है।

❑

डॉ. हरीश कुमार सेठी

विश्व की संपर्क-भाषा : अनुवाद

आज 'अनुवाद' एक स्वतंत्र विषय एवं महत्वपूर्ण विधा के रूप में न केवल अपना विशेष स्थान बना चुका है बल्कि उसका व्यवस्थित ढंग से उत्तरोत्तर विकास भी होता जा रहा है। किसी भी देश-समाज की साहित्यिक और सांस्कृतिक उत्कृष्टता का दर्पण मौलिक सृजन के समान अनुवाद भी होता है। विश्व सभ्यता के विकास में अनुवाद की सराहनीय भूमिका रही है। यह भूमिका साहित्य, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र तक ही नहीं, अपितु सामाजिक-सांस्कृतिक और अन्य कई संदर्भों में भी सराहनीय रही है क्योंकि अनुवाद ही वह एकमात्र माध्यम है जिसकी सहायता से विभिन्न सभ्यताओं और संस्कृतियों, धर्मों एवं सामाजिक स्तरों से देश-विदेश में संवाद स्थापित हो पाता है। विज्ञान की बढ़ती हुई आवश्यकताओं एवं नित्य नए अनुसंधानों ने मानव-जीवन को सरल बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। निरंतर आगे बढ़ती जा रही प्रौद्योगिकी एवं शोध-विकास ने विज्ञान को बहु-आयामी स्वरूप प्रदान किया है। आज के आधुनिक जीवन में वैज्ञानिक अनुसंधान रूपी औज़ार-उपकरण वरदान की भाँति हैं एवं इनके अभाव में जीवन की कल्पना असंभव नहीं तो जटिल अवश्य ही है। लेकिन यदि ये भिन्न भाषा-भाषियों द्वारा विकसित औज़ार-उपकरण हैं तो इनसे अपनी भाषा में साक्षात् परिचय अनुवाद के बिना संभव नहीं है।

आज के इस वैज्ञानिक युग में, विज्ञान के क्षेत्र में अनेकानेक भाषाओं में जो निरंतर चिंतन-मनन, अध्ययन-अनुसंधान और लेखन-कार्य हो रहा है उसे अन्य भाषा-भाषियों तक पहुँचाने के लिए भिन्न-भिन्न भाषाओं में उसके अनुवाद की आवश्यकता होती है। संपूर्ण विश्व में ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में हो रही संवृद्धि और अद्यतन जानकारी आदि को अन्य भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से जाना जा सकता है। अनुवाद के जरिए और इसकी सहायता से आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की समझ पैदा होती है। दूसरों

के ज्ञान-भंडार से परिचित होने पर हमारे चिंतन को प्रौढ़ता एवं परिपक्वता प्राप्त होती है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि इस सूचनापरक या ज्ञानात्मक साहित्य के परस्पर विनिमय की आवश्यकता के परिणामस्वरूप अनुवाद की महत्ता विश्व-स्तर पर मान्य हुई।

इसी प्रकार, कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक आदि सृजनात्मक साहित्य के रूप में अन्य देश अथवा अन्य समाज-विशेष की सांस्कृतिक संपदा का बोध हमें तब तक नहीं हो पाता जब तक कि उन समस्त श्रेष्ठ कृतियों का अपनी भाषा में अनुवाद न उपलब्ध हो। वैसे एक ही देश की भौगोलिक सीमा के भीतर कई स्वीकृत व्यावहारिक भाषाओं के कारण भी अनुवाद की आवश्यकता दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। इस प्रकार अनुवाद की मूल चेतना के परिप्रेक्ष्य में देखें तो अनुवाद विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच परस्पर विचार-विनिमय का 'माध्यम' है, दो भाषाओं के बीच 'संपर्क सूत्र' है। सार रूप में यही कहा जा सकता है कि संप्रेषण-सेतु अनुवाद, आधुनिक विश्व की अपरिहार्य आवश्यकता बन गया है। इसीलिए आदान-प्रदान के इस सशक्त माध्यम को सांस्कृतिक एकीकरण करने वाला 'सांस्कृतिक सेतु' की संज्ञा दी गई है।

अनुवाद के माध्यम से ही विश्व-साहित्य, संस्कृति, प्रगति, परंपराओं और रीति-रिवाज आदि की परस्पर जानकारी संभव है। इसी अनुवाद के कारण ही 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात् 'विश्व-ऐक्य' की भावना का प्रचार-प्रसार हो पाता है एवं इस भावना को मूर्त रूप देना संभव हो पाता है क्योंकि विश्व की एकता की संकल्पना तब तक कोरी कल्पना-मात्र ही रहेगी, जब तक कि विभिन्न समाजों-राष्ट्रों के नागरिक एक-दूसरे के विषय में कमोबेश जानते न हों। जे.डब्ल्यू. गेटे ने ठीक ही कहा है कि ''अनुवाद की अपूर्णता के संबंध में कोई चाहे जो भी कहे, परंतु अनुवाद विश्व के सभी कार्यों से अधिक महत्वपूर्ण और महानतम कार्य है।''[1] कल्पना कीजिए कि यदि अनुवाद कर्म नहीं किया जाता तो क्या व्यक्ति अन्य भाषाओं में रचित समुन्नत ज्ञान-विज्ञान और साहित्य के संबंध में जानकारी रख पाता और उसे आत्मसात् कर पाता? यदि अनुवाद कर्म आरंभ न हुआ होता तो मानव अपनी एक ही भाषा अथवा कुछेक संपर्कित भाषाओं के साहित्य-ज्ञान तक ही सीमित होकर रह जाता। तब उसकी स्थिति कुएँ की उस मेंढक की तरह हो जाती जो कुएँ को ही सागर समझ बैठता है। यदि ऐसा हो जाता तो यह स्थिति अत्यंत भयंकर सिद्ध होती और मानव-विकास संभव ही न हो पाता। इसलिए डॉ. रीतारानी पालीवाल ने ठीक ही लिखा है कि ''मानव के पास आयु, समय और साधन की एक सीमा रहती है। हर व्यक्ति संसार की प्रत्येक भाषा नहीं सीख सकता। ऐसी स्थिति में अनुवाद ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा हम सभी भाषाओं से संपर्क स्थापित कर सकते हैं।''[2] इसी तरह, डॉ. जी. गोपीनाथन ने भी यही मंतव्य व्यक्त करते हुए इसे

एक ऐसी तकनीक माना है ''जिसका आविष्कार मनुष्य ने बहुभाषिक स्थिति की विडंबनाओं से बचने के लिए किया था।''[3]

आज अपेक्षा की जा रही है कि विश्व एक इकाई बन सके, सभी देशों का भूमंडलीकरण हो। भारतीय संस्कृति आदि युग से ही 'विश्व कुटुम्बकम्' की दुंदुभि बजाती रही है। ऐसे महत् उद्देश्य के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि विभिन्न भाषाएँ तथा रीति-रिवाजों के बावजूद, सांस्कृतिक एवं सामाजिक वैविध्य के बावजूद तथा वैचारिक एवं दार्शनिक भिन्नता के बावजूद पूरे विश्व को एक ऐसे सूत्र और एक ऐसे भावलोक में बाँधा जाए जहाँ परस्पर संपर्क संभव बन सके, अपने-पराए का, देश-विदेश का और सीमा-निर्धारण का भेद मिट सके एवं इंसानियत की एकरूपता स्थापित हो सके। सब, सबकी भाषा बोल सकें, सब सभी को समझ सकें, संप्रेषण-सेतु का सृजन हो सके, दायरों एवं बंधनों को उखाड़ फेंका जाए। इसके लिए सर्वाधिक अपेक्षा है – किसी एक ऐसी भाषा की जिसे पूरे विश्व के सभी लोग बोले-समझें। किंतु यह उतना ही असंभव है जितना पृथ्वी का आसमान पर होना। अतः ऐसे में 'अनुवाद' ही एकमात्र ऐसा विकल्प दिखाई देता है जो विश्व की एकता को भाषित कर सकता है, पूरे विश्व की मौन वाणी को स्वर प्रदान कर सकता है। 'अनुवाद' को विश्व की संपर्क-भाषा के रूप में स्थापित करने की यही बेला है। इस दृष्टि से अनुवाद की प्रासंगिकता तथा उपादेयता पूर्णतः असंदिग्ध है। आज़ादी के बाद से लेकर आज तक अनुवाद ने इस दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई है। अतः अनुवाद को विश्व की एक संपर्क-भाषा के रूप में मान्यता देते हुए इसके प्रति विशिष्ट रुझान पैदा करना, इसे दिनोंदिन प्रोत्साहन देना और इसके प्रति सामाजिक दायित्व का अनिवार्य निर्वाह करना आज के युग की सबसे बड़ी आवश्यकता जान पड़ती है।

❑

संदर्भ

1. अनुवाद सूक्तियाँ (राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में), संकलन एवं अनुवाद – डॉ. गार्गी गुप्त एवं डॉ. कुसुम अग्रवाल, पृष्ठ 18
2. अनुवाद प्रक्रिया, डॉ. रीतारानी पालीवाल, पृष्ठ 106
3. अनुवाद : सिद्धांत और प्रयोग, डॉ. गोपीनाथन, पृष्ठ 10

प्रो. हेमचंद्र पाँडे

अनुवाद के विभिन्न प्रतिदर्श

अनुवाद के प्रतिदर्शों का आधार

अनुवाद दो भाषाओं के बीच घटित होने वाली प्रक्रिया और उसकी परिणति भी है। अनुवादशास्त्र का एक प्रमुख विषय यह उद्‌घाटित करना है कि अनुवाद की प्रक्रिया किस प्रकार घटित होती है। अनुवाद की प्रक्रिया को मूलपाठ और अनूदित पाठ के विश्लेषण द्वारा परोक्ष रूप से ही जाना जा सकता है। इस प्रकार के विश्लेषण से मूलपाठ और अनूदित पाठ की विशेषताएँ सामने आती हैं जिनके आधार पर अनुवाद के प्रतिदर्श (Models) निर्धारित किए जाते हैं। अनुवाद के प्रतिदर्शों को 'अनुवाद के सिद्धांत' भी कहा जाता है। चूँकि अनुवाद मुख्यतः व्यावहारिक प्रक्रिया है, इसलिए उसके प्रतिदर्श व्यावहारिक अनुवाद पर ही आधारित होते हैं। इस तरह हम कह सकते हैं कि अनुवाद के प्रतिदर्शों का संबंध अनुवाद की प्रक्रिया से है। इन प्रतिदर्शों का शास्त्रीय पक्ष अनुवादशास्त्र द्वारा निर्धारित किया जाता है।

मूलपाठ और अनूदित पाठ के तीन पक्ष : रूप, अर्थ और विषय

अनुवाद की प्रक्रिया को समझने के लिए पहले यह जानना अवश्यक है कि मूलपाठ की विशेषताओं को अनूदित पाठ में किस प्रकार अभिव्यक्त किया जाता है। इसके लिए अनुवाद के विविध पक्षों की जानकारी होना भी आवश्यक है।

किसी भी मूलपाठ और अनूदित पाठ के तीन पक्ष होते हैं – रूप (Form), अर्थ (Meaning) और विषय (Contents)।

रूप-पक्ष से अभिप्राय है मूलपाठ और अनूदित पाठ का भाषिक पक्ष। इसलिए मूलपाठ की भाषिक विशेषताओं की अनूदित पाठ में अभिव्यक्ति अनुवाद का रूप-पक्ष कहलाएगा।

अर्थ-पक्ष से अभिप्राय है मूलपाठ और अनूदित पाठ के भाषिक साधनों द्वारा अभिव्यक्त

अर्थ। इसलिए मूलपाठ की अर्थगत विशेषताओं की अनूदित पाठ में अभिव्यक्ति अनुवाद का अर्थ-पक्ष कहलाएगा।

विषय-पक्ष से अभिप्राय है मूलपाठ और अनूदित पाठ की विषयवस्तु। इसलिए मूलपाठ की विषयवस्तु की अनूदित पाठ में सम्यक् अभिव्यक्ति अनुवाद का विषय-पक्ष कहलाएगा। मूलपाठ की विषय-वस्तु विभिन्न प्रकार की हो सकती है – वैज्ञानिक, प्रशासनिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानक, सामाजिक, राजनीतिक, मीडियाई आदि। विभिन्न प्रकार के पाठों का अनुवाद करते समय इनमें से कोई भी पक्ष अनुवाद की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकता है।

उक्त तीन पक्षों के आधार पर अनुवाद के तीन प्रतिदर्श निर्धारित किए जा सकते हैं – (1) भाषावैज्ञानिक प्रतिदर्श (Linguistic Model), (2) अर्थवाचक प्रतिदर्श (Denotative Model); और (3) संप्रेषणपरक प्रतिदर्श (Communicative Model)। अनुवादशास्त्र की पुस्तकों में तीन से अधिक प्रतिदर्शों की चर्चा की जाती है। परंतु हमारे विचार में रूप, अर्थ और विषय की दृष्टि से तीन मुख्य प्रतिदर्श निर्धारित करना ही उचित है। इन प्रतिदर्शों की चर्चा आगे की जा रही है।

(1) अनुवाद का भाषावैज्ञानिक प्रतिदर्श

अनुवाद के भाषावैज्ञानिक प्रतिदर्श से तात्पर्य है मूलपाठ और अनूदित पाठ में भाषिक तुल्यता स्थापित करना। अनुवाद का भाषावैज्ञानिक प्रतिदर्श रूसी अनुवादशास्त्री अन्द्रेइ फ़्योदोरोव द्वारा प्रस्तुत किया गया है।[1] फ़्योदोरोव के विचार में अनुवाद-सिद्धांत का विकास भाषाशास्त्रीय (Philological)[2] अनुशासन के रूप में होना चाहिए (फ़्योदोरोव 1958, पृष्ठ 4)।

फ़्योदोरोव के अनुसार अनुवाद करने का अर्थ स्रोत भाषा के साधनों द्वारा जो कुछ अभिव्यक्त किया गया है उसे लक्ष्य भाषा के साधनों द्वारा रूप और अर्थ की एकता को बनाए रखते हुए ठीक-ठीक और पूरी तरह अभिव्यक्त करना (फ़्योदोरोव 1958, पृष्ठ 11)।[3] अनूदित पाठ में भी भाषा ही संप्रेषण की भूमिका निभाती है। किसी भी तरह के पाठ का अनुवाद करते समय अनुवादक का भाषा से सरोकार होता ही है। इसलिए भाषा की दृष्टि से अनुवाद में सम्यक् अभिव्यक्ति को विशेष महत्व दिया गया है। अनुवाद में सम्यक् अभिव्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि अनुवादक मूलपाठ की भाषा और उसके कथ्य को ठीक-ठीक समझ कर उसे लक्ष्य भाषा में पूरी तरह से अभिव्यक्त करे। दो भाषाओं के बीच ऐसी स्थिति भी होती है कि भाषा-ज्ञान की कमी के कारण अनुवादक मूलपाठ को ठीक से न समझ कर अथवा भाषा-ज्ञान होते हुए भी अपने ढंग से समझ कर उसका अनुवाद कर देता है। इसलिए अनुवाद की प्रक्रिया में दो बातों की ओर

विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए (फ़्योदोरोव 1958, पृष्ठ 12) :

(क) अनुवाद करने से पूर्व अनुवादक को चाहिए कि वह अनुवाद्य सामग्री को अच्छी तरह समझ ले और अपने मन में उसे स्पष्ट कर ले। इसके लिए भाषाई बिंबों का या एक तरह के 'कच्चे अनुवाद' का सहारा भी लिया जा सकता है;

(ख) अनुवाद्य सामग्री को अच्छी तरह समझ लेने के बाद अनुवादक को लक्ष्य भाषा के उपयुक्त साधनों का चयन करना चाहिए।

अनुवाद के भाषावैज्ञानिक पक्ष को रेखांकित करते हुए फ़्योदोरोव ने भाषाओं के व्यतिरेकी अध्ययन पर भी बल दिया है जिसके द्वारा स्रोत और लक्ष्य भाषाओं के युग्मों की अपनी-अपनी विशेषताओं और नियमितताओं को उद्घाटित किया जा सकता है (फ़्योदोरोव 1958, पृष्ठ 18)। इससे दोनों भाषाओं की समानताओं और असमानताओं का पता चल सकेगा। परंतु लक्ष्य भाषा के साधन का चयन संदर्भ के अनुसार ही किया जाना चाहिए अन्यथा अनुवाद शाब्दिक हो सकता है (फ़्योदोरोव 1958, पृष्ठ 19)।

इसके बाद फ़्योदोरोव ने अंग्रेजी, जर्मन, फ्रांसीसी और स्पैनिश भाषाओं से रूसी में किए गए अनुवादों के उदाहरण देते हुए शब्दावली और व्याकरण के आधार पर अनुवाद के भाषावैज्ञानिक प्रतिदर्श की विस्तृत चर्चा की है।

(2) अनुवाद का अर्थवाचक प्रतिदर्श

अनुवाद के अर्थवाचक प्रतिदर्श से तात्पर्य है मूलपाठ में प्रयुक्त शब्दों के वाचक अर्थों की अनूदित पाठ में तुल्यता स्थापित करना। इस प्रतिदर्श का आधार यह है कि किसी भी पाठ में प्रयुक्त शब्द निश्चित अर्थ के वाचक होते हैं। शब्दों के द्वारा अमुक-अमुक पदार्थ, परिघटना अथवा संबंध का बोध होता है। इसे ही हम 'अर्थवाचकता' या 'शब्दवाचकता' कह सकते हैं। अर्थवाचकता ही शब्द का गुण/लक्षण है। सभी भाषाओं में यह समानता है कि वस्तुजगत की अभिव्यक्ति का साधन शब्द ही होते हैं। इसीलिए शब्दों के द्वारा अनुवाद संभव होता है। मूलपाठ के कथ्य की अभिव्यक्ति के लिए शब्द के वाचक अर्थ की अभिव्यक्ति होना आवश्यक है। इसीलिए अनुवाद में अर्थवाचकता की विशेष भूमिका होती है।

हमारे विचार में अनुवाद के अर्थवाचक प्रतिदर्श के तीन पक्ष विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं – (अ) शब्द की अनेकार्थकता, (आ) उचित समानक का चयन; और (इ) अनूदित पाठ के ग्रहणकर्ता द्वारा उचित अर्थ का ग्रहण।

(अ) शब्द की अनेकार्थकता : शब्द प्रायः अनेकार्थक होते हैं। स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के शब्दों में वाचक विभिन्न अर्थ समान नहीं होते हैं। इसलिए अनुवादक को मूलपाठ के वाचक अर्थ के अनुसार लक्ष्य भाषा के उसी अर्थ के वाचक शब्द का

चयन करना होता है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी के cover शब्द के हिंदी में दो अर्थ – 'आवरण' और 'खोल' – हो सकते हैं।

cover of book	पुस्तक का आवरण
cover of harmonium	हारमोनियम का खोल

यहाँ पर अंग्रेजी के cover के लिए प्रयुक्त 'आवरण' और 'खोल' शब्द एक-दूसरे को स्थानापन्न नहीं कर सकते हैं क्योंकि उनका वाचक अर्थ अलग-अलग है।

एक अन्य उदाहरण हिंदी के 'पाठ' शब्द और उसके अंग्रेजी समानकों का लिया जा सकता है। अंग्रेजी में इस शब्द का एक से अधिक प्रकार से अनुवाद संभव है – text, lesson, reading, recitation। 'पाठ' शब्द के लिए अंग्रेजी में उचित समानक का चयन इस बात पर निर्भर करेगा कि संदर्भ-विशेष में हिंदी का 'पाठ' शब्द किस अर्थ का वाचक है, किस अर्थ को अभिव्यक्त कर रहा है। उदाहरण के लिए :

पाठ का चयन	selection of text
पहला पाठ	first lesson
काव्य-पाठ	recitation of poetry

यहाँ पर हिंदी के 'पाठ' शब्द के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी के text, lesson और recitation शब्द एक-दूसरे को स्थानापन्न नहीं कर सकते हैं क्योंकि उनके वाचक अर्थ अलग-अलग हैं।

शब्द की अनेकार्थकता का एक अन्य उदाहरण नीचे दिए गए वाक्य में भी देखा जा सकता है :

1) Worship of money is no new thing, but it is a more harmful thing than it used to be, for several reasons. ('Property', *The Basic writings of Bertrand Russell,* Clarion, 1961, page 488)

1अ) धन की पूजा कोई नई बात नहीं है परंतु कई कारणों से वह पहले से अधिक हानिकारक हो गई है।

इस वाक्य में thing का अनुवाद 'बात' किया गया है जबकि These are new things 'ये नई चीज़ें हैं' वाक्य में thing का अनुवाद 'चीज़' ही किया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुवाद के अर्थवाचक प्रतिदर्श में शब्द की अनेकार्थकता की क्या भूमिका है।

(आ) उचित समानक का चयन : व्यावहारिक अनुवाद का एक महत्वपूर्ण पक्ष है – उचित समानक का चयन। स्रोत भाषा के शब्द में लक्ष्य भाषा में एक से अधिक

पर्याय या समानक हो सकते हैं, जो सभी एक ही अर्थ के वाचक होते हैं। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी शब्द woman के लिए हिंदी में 'महिला', 'स्त्री', 'औरत' तथा और भी कुछ शब्दों का प्रयोग होता है; school के लिए हिंदी में 'विद्यालय', 'पाठशाला', 'स्कूल' तथा और भी कुछ शब्दों का प्रयोग होता है। हिंदी के ये शब्द एक ही अर्थ के वाचक हैं। इसलिए कहीं-कहीं ये शब्द एक-दूसरे को स्थानापन्न कर सकते हैं। नीचे दिए गए उदाहरणों में इन सभी समानकों का प्रयोग संभव है :

2) यह स्थान केवल महिलाओं/स्त्रियों/औरतों के लिए है।

3) तुम किस विद्यालय/पाठशाला/स्कूल में पढ़ते हो?

परंतु सब जगह इन पर्यायों को स्थानापन्न करना संभव नहीं होता है। उदाहरण के लिए :

National Commission for Women	राष्ट्रीय महिला आयोग
women writers	महिला लेखिकाएँ

यहाँ पर 'महिला' शब्द के स्थान पर उसके किसी अन्य पर्याय का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुवाद के अर्थवाचक प्रतिदर्श में उचित समानक के चयन की क्या भूमिका है।

(इ) अनूदित पाठ के ग्रहणकर्ता द्वारा उचित अर्थ का ग्रहण : शब्द की अनेकार्थकता और उचित समानक के चयन के अतिरिक्त अनूदित पाठ के प्राप्तकर्ता द्वारा उचित अर्थ का ग्रहण भी अनुवाद के अर्थवाचक प्रतिदर्श का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा में प्रयुक्त कोई शब्द दो अलग-अलग अर्थों का वाचक हो सकता है। अनूदित पाठ के प्राप्तकर्ता द्वारा उचित अर्थ का ग्रहण करने में ही अनुवाद की सफलता है। इसलिए यह आवश्यक है कि स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा में प्रयुक्त किसी शब्द के द्वारा अभिव्यक्त दो अलग-अलग अर्थों को अनुवाद का प्राप्तकर्ता उचित रूप में ग्रहण करे। उदाहरण के लिए :

4) Relief material has been sent to flood-affected area.

4अ) बाढ़ से प्रभावित क्षेत्रों के लिए राहत सामग्री भेज दी गई है।

5) The work having been done, everybody felt a great relief.

5अ) काम पूरा होने पर सबको बड़ी राहत मिली।

इन दोनों वाक्यों में प्रयुक्त अंग्रेजी के relief शब्द के लिए हिंदी में 'राहत' शब्द का प्रयोग किया गया है यद्यपि ये शब्द अपने आप में अलग-अलग अर्थों के वाचक हैं। वाक्य 4 और 4अ में इन शब्दों के द्वारा भौतिक पदार्थों का अर्थ अभिव्यक्त किया

गया है जबकि वाक्य 5 और 5अ में इन शब्दों के द्वारा मनःस्थिति का अर्थ अभिव्यक्त किया गया है। अनूदित पाठ के प्राप्तकर्ता द्वारा इन अर्थों का ग्रहण करने में ही अनुवाद की सफलता मानी जाएगी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुवाद के अर्थवाचक प्रतिदर्श में अनूदित पाठ के प्राप्तकर्ता द्वारा उचित अर्थ के ग्रहण की क्या भूमिका है।

(3) अनुवाद का संप्रेषणपरक प्रतिदर्श

अनुवाद के संप्रेषणपरक प्रतिदर्श से तात्पर्य है – ऐसी द्विभाषिक संप्रेषण प्रक्रिया जिसमें अनुवादक मूलपाठ के अर्थ को ग्रहण करके उसे लक्ष्य भाषा में संप्रेषित करता है (गोर्बोव्स्की 2004, पृष्ठ 236)। अनुवाद का यह प्रतिदर्श जर्मन अनुवादशास्त्री ओ. कादे ने प्रस्तुत किया है। अनुवाद के संप्रेषणपरक प्रतिदर्श में संप्रेषण को तीन अवस्थाओं में बाँटा गया है।

पहली अवस्था में प्रेषक और अनुवादक के बीच में संप्रेषण होता है। इस अवस्था में अनुवादक मूलपाठ का प्राप्तकर्ता होता है।

दूसरी अवस्था में अनुवादक मूलपाठ का कूटांतरण (Recodification) करता है अर्थात् एक भाषा (भाषा$_1$) के पाठ को दूसरी (भाषा$_2$) में बदलता है।

तीसरी अवस्था में अनुवादक और प्राप्तकर्ता के बीच संप्रेषण घटित होता है। इस अवस्था में अनुवादक की भूमिका प्रेषक की हो जाती है।

अनुवाद के इस प्रतिदर्श को हम निम्न प्रकार से प्रस्तुत कर सकते हैं :

प्रेषक (भाषा$_1$) $\Rightarrow$ प्राप्तकर्ता .... कूटांतरण... प्रेषक (भाषा$_2$) $\Rightarrow$ प्राप्तकर्ता,
(अनुवादक) (अनुवादक)

इस प्रतिदर्श में अनुवादक मूलपाठ का प्राप्तकर्ता और अनूदित पाठ का प्रेषक होता है। इस पूरी प्रक्रिया में कूटांतरण सबसे महत्वपूर्ण है। यदि कूटांतरण सही हुआ है तो संप्रेषण भी सही होगा। कूटांतरण सही होने के लिए यह आवश्यक है कि प्राप्तकर्ता के रूप में अनुवादक मूलपाठ को उचित रूप में ग्रहण करे और उसका कूटांतरण करते समय प्रेषक के रूप में उचित भाषिक साधनों का प्रयोग करे। संप्रेषण की सफलता के लिए लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार भाषिक साधनों का चयन किया जाना चाहिए। तभी मूलपाठ और अनूदित पाठ में तुल्यता स्थापित हो सकेगी। इस तरह यह प्रतिदर्श इस बात को रेखांकित करता है कि अंतिम प्राप्तकर्ता पर मूलपाठ का वही प्रभाव पड़ना चाहिए जो अनुवादक पर प्रथम प्राप्तकर्ता के रूप में पड़ता है।

रूसी अनुवादशास्त्री र.क. मिन्यार-बेलोरूचेव लिखते हैं कि अनुवाद ऐसी वाक्-क्रिया (Speech Activity) है जिसमें संप्रेषण के तत्व द्विरूपित हो जाते हैं – दो प्रेषक जिनकी

प्रेरणाएँ और लक्ष्य अलग-अलग हो सकते हैं, दो अलग-अलग परिस्थितियाँ, दो रचनाएँ, और दो प्राप्तकर्ता। वाक्-क्रिया के रूप में अनुवाद की यह प्रमुख विशेषता है (मिन्यार-बेलोरूचेव 1980, पृष्ठ 31)।

निष्कर्ष

ऊपर हमने अनुवाद के तीन मुख्य प्रतिदर्शों का परिचय दिया है। ये प्रतिदर्श अनुवाद के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करते हैं। इस दृष्टि से ये तीनों प्रतिदर्श अनुवाद की प्रक्रिया को अलग-अलग ढंग से समझने में सहायक माने जा सकते हैं। अनुवाद के भाषावैज्ञानिक प्रतिदर्श में अनुवाद के भाषिक पक्ष को रेखांकित किया गया है; अनुवाद का अर्थवाचक प्रतिदर्श अनुवाद और वस्तुजगत के संबंध को स्पष्ट करता है; तथा अनुवाद के संप्रेषणपरक प्रतिदर्श के द्वारा संप्रेषण में अनुवाद की भूमिका पर बल दिया गया है। इनमें से किसी एक प्रतिदर्श को अपने आप में संपूर्ण नहीं माना जा सकता है क्योंकि किसी भी एक प्रक्रिया और उसकी परिणति के रूप में अनुवाद के एक से अधिक पक्ष होते हैं। इसलिए अनुवाद के विभिन्न प्रतिदर्शों का समन्वय ही अनुवाद को समझने में सहायक हो सकता है।

❑

संदर्भ

1. अन्द्रेइ फ़्योदोरोव को हम रूसी अनुवादशास्त्र का जनक कह सकते हैं क्योंकि उन्होंने ही सबसे पहले इसे सैद्धांतिक आधार प्रदान किया था। 1930 के दशक में 'मक्सीम गोर्की मास्को साहित्य संस्थान' में उन्होंने अनुवादशास्त्र का अध्यापन किया था और इस विषय की उनकी पुस्तक *'अनुवाद-सिद्धांत की भूमिका'* का पहला संस्करण सन् 1953 में प्रकाशित हुआ था।
2. रूसी में भाषा और साहित्य के अध्ययन को 'फिलॉलॉजी' (Philology) कहा जाता है जिसके लिए हमने 'भाषाशास्त्र' शब्द का प्रयोग किया है। स्वयं फ़्योदोरोव ने 'प्रतिदर्श' शब्द का प्रयोग नहीं किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक *'अनुवाद-सिद्धांत की भूमिका'* (1958) मे अनुवाद के भाषावैज्ञानिक पक्ष की चर्चा की है। हमने एकरूपता बनाए रखने के लिए सर्वत्र 'प्रतिदर्श' शब्द को अपनाया है।
3. अनुवादशास्त्र में आजकल प्रचलित हुए 'स्रोत भाषा', 'लक्ष्य भाषा', 'व्यतिरेकी अध्ययन' आदि पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग फ़्योदोरोव ने नहीं किया है। फ़्योदोरोव के आशय की रक्षा करते हुए हमने सर्वत्र इन्हीं शब्दों का प्रयोग करना उचित समझा है ताकि पारिभाषिक शब्दों की एकरूपता बनी रहे।

डॉ. जगदीश शर्मा

सामाजिक सद्भाव में अनुवाद की भूमिका

समाजशास्त्रियों द्वारा दी गई परिभाषाओं के अनुसार संबंधों, अस्मिता, सामाजिक एकता एवं परस्पर आदान-प्रदान से आवश्यकतापरक मानव समुदाय अथवा मनुष्यों के समूह को समाज कहा गया है। प्राचीनकाल से ही जीवन को बनाए रखने हेतु विभिन्न समाजों का वर्णन मिलता है। जैसे – आखेटक समाज, घुमंतू कबीलाई समाज, कृषक समाज आदि। यहाँ तक कि जानवरों में भी कुछ समाजों का पता चला है। जैसे – गुरिल्ला अथवा एप समाज। समान क्षेत्र में निवास करने या एक ही बोली बोलने वाले तथा एक ही धर्म के अनुयायी लोग भी एक विशिष्ट समाज का निर्माण करते हैं जैसे – हिंदू, सिक्ख, यहूदी, मुस्लिम आदि। यही कारण है कि हम व्यक्ति को केंद्र में रखते हुए एक छोटे समाज (जैसे ग्राम-समाज) से लेकर शहरी-समाज, प्रांतीय-समाज, विकसित या अविकसित समाज और फिर राष्ट्रीय स्तर पर गुजराती-समाज, बंग-समाज या पंजाबी-समाज के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय समाज या फिलिस्तीनी-समाज, अरबी-समाज, एशियाई समाज, यूरोपीयाई/अफ्रीकी-समाज आदि का नाम दे देते हैं। कभी-कभी इस प्रकार के समाज का निर्माण व्यक्तियों के पेशे या व्यवसाय के आधार पर भी किया जाता है। जैसे – कामगार-समाज, अध्यापक-समाज, पंडित-पादरी-समाज, कॉर्पोरेट-समाज, पत्रकार/डॉक्टर/इंजीनियर-समाज, औद्योगिक समाज, पूर्व-औद्योगिक-समाज एवं उत्तर औद्योगिक समाज आदि। परंतु इसी समाज को उसके भाषाई या सांस्कृतिक रूप से निम्न अथवा श्रेष्ठ हो जाने पर उसे विकसित-समाज या अविकसित-समाज, सिविल-समाज, वैज्ञानिक-समाज, वर्ग-रहित-समाज, जन-समाज, मुक्त अथवा खुला समाज भी कह देते हैं। मानव विकास की प्रक्रिया पर यदि नजर दौड़ाई जाए तो यही समाज सभ्य या असभ्य भी कहे जाते रहे हैं। विकी के अनुसार लातिनी मूल के इस शब्द में उपर्युक्त गुणों के साथ-साथ दोस्ती तथा अन्योन्याश्रित का भाव प्रमुख रहता है और संस्कृति एवं परंपराएँ प्रधान

घटक होते हैं।

इस प्रकार की सामाजिक संरचना पर जब ध्यान दिया जाता है तो एक दर्शन यह भी उभरता है कि समाज वास्तव में विभिन्न घटकों का एक ऐसा समूह है जो धर्म, अर्थ, आवश्यकता, भाषा, संस्कृति, क्षेत्र अथवा व्यवसाय आदि जैसे अनेक या किसी एक कारण से गुंफित होकर एक समूह के रूप में परिभाषित होता है। आधुनिक समाज में तो समाज की परिभाषा और भी व्यापक/विस्तृत हो गई है। आज अत्यधिक विकसित समाज में (जैसे आर्थिक व तकनीकी रूप से विकसित समाज हैं, जो विकास के परिचायक हैं) उच्च रहन-सहन, समुन्नत संचार एवं तकनीकी तथा सुविकसित प्रौद्योगिकी का अपेक्षाकृत सुस्पष्ट उपभोग एवं प्रभाव दिखाई देता है।

सूचना व संचार क्रांति के परिणामस्वरूप आज एक और समाज का निर्माण हो गया है, जिसे हम 'इंटरनेट-समाज' का नाम देते हैं। यह वह समाज है जो परोक्ष रूप से एक-दूसरे से अत्यधिक संगठित रूप से मिलकर अभूतपूर्व गति और मात्रा में सहयोग कर रहा है। तकनीकी विकास में विभिन्न देशों के वैज्ञानिक आपसी शोध एवं विकास को सहयोजित कर गति प्रदान कर मानवता के लिए एड्स जैसे भयंकर रोगों का इलाज खोजने का प्रयत्न कर रहे हैं अथवा चंद्रमा पर पानी के विशाल भंडार खोजने की साधना में रत हैं। स्पष्ट है कि आपसी हित साधन और लाभ के पीछे आपसी सहयोग की भावना निहित है, जो एक विलक्षण समाज निर्माण का उदाहरण है।

पश्चिम के सामाजिक ढाँचे पर जब हम विहंगम दृष्टि डालते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वहाँ भारतीय समाज जैसी बहु-सांस्कृतिकता या बहुभाषिक समाज की चुनौतियाँ कम हैं। वहाँ भाषिक अथवा सांस्कृतिक या क्षेत्रीय और व्यावसायिक व्यक्ति-वैभिन्न्य की चुनौतियाँ तो हैं ही (विशेष रूप से कनाडा, फिजी, कैरीबियाई तथा मॉरीशस जैसे नव-स्थापित राष्ट्रों और उन देशों में जहाँ अप्रवासियों की भारी आवाजाही रही है) परंतु यह समस्या इन राष्ट्रों के लिए कोई अस्मिता का प्रश्न नहीं है क्योंकि अरब या यूरोप अथवा अमेरिकी और लातिनी-अमेरिकी देशों में एकल धर्म अथवा भाषाई लोगों का बहुमत है। कुछ राष्ट्रों में तो एक ही धर्म सरकारी स्तर पर विहित है। वहाँ राज्य-प्रश्रेयतर किसी अन्य धर्म को सार्वजनिक रूप से प्रचारित-प्रसारित करने की आज्ञा नहीं है। इसी प्रकार, कुछ राष्ट्रों की एक ही सरकारी भाषा है, जिसका प्रयोग शासकीय क्षेत्र में करना प्रत्येक नागरिक के लिए अनिवार्य है। इस प्रकार के समाज में भले ही गौण रूप से विविधतापूर्ण भाषाई, सांस्कृतिक अथवा धार्मिक व्यवहार होता हो परंतु उनके लिए वहाँ भारत जैसा यक्ष प्रश्न नहीं हैं जिसका मूल आधार बहुभाषिकता एवं बहु-सांस्कृतिकता है।

अनुवाद समाज के उपेक्षित और हाशिये के वर्ग को मुखरता देकर उसे समग्र से जोड़ता है। यह शोषितों और शासितों को मुख्य धारा या सर्वधारा समाज में जुड़ने का अवकाश भी प्रदान करता है। स्त्रीवादी आंदोलन, तीसरे विश्व के आंदोलन अथवा पॉवर पॉलिटिक्स की जब चर्चा होती है तो अनुवाद को निश्चित रूप से इन आंदोलनों से जोड़ा जाता रहा है और वास्तव में अनुवाद ने ही इन्हें मुखरता दी है। (आक्षेप यह भी है कि कुछ नक्सलवादी मानसिकता के शिकार अनुवादकों द्वारा एक कुचक्र के माध्यम से इनकी 'आवाज' को इस प्रकार अपभ्रंशित (विकृत) किया गया ताकि उन्हें आसानी से शोषित किया जा सके) अनुवाद से हमेशा यह अपेक्षा की गई है कि वह सभी वर्गों को आपस में जोड़ेगा। गायत्री स्पिवॉक ने इन पक्षों पर 'अस्मिता' (Identity) को लेकर लंबी चर्चा की है, जिसमें 'तीसरे विश्व' और 'स्त्री' की आवाज तथा हाशिये पर खड़े वर्गों के लिए भी अभिव्यक्ति की मांग तथा उसे सुस्थापित करने का सकारात्मक प्रयास है। स्पष्ट है अनुवाद समाज को जोड़ने का एक उत्तम साधन है। गांधी जी ने जब दक्षिण अफ्रीका में अपने आंदोलनों के दौरान विभिन्न समुदायों एवं भाषा-भाषियों के मध्य संवाद के प्रश्न का हल ढूँढ़ना चाहा तो उन्हें अनुवाद ही एकमात्र हल सूझा था। परिणामतः 'इंडियन ओपिनियन' व 'सिविल अवज्ञा' तथा 'सत्याग्रह' आदि शब्दों का प्रयोग किया गया तथा इन पत्रों के संस्करण, अनूदित रूप में स्थानीय भाषाओं में प्रकाशित किए गए। यहाँ तक कि जब एक रूसी विद्वान ने लियो टॉलस्टॉय द्वारा लिखे गए पत्रों का हिंदी अनुवाद 'एक हिंदू के नाम पत्र' का अनुवाद किया तो गांधी जी ने उसके सही अनुवाद की पुष्टि के लिए खुद टॉलस्टॉय को पत्र लिखा ताकि मूल पत्रों की प्रति के साथ उसका मिलान कर पत्रों के सही-सही अनुवाद को सुनिश्चित किया जा सके।

बहु-भाषिक और बहु-सांस्कृतिक समाज का भारतीय स्वरूप विश्व की 'अनंतता' का विलक्षण उदाहरण है। एक प्रचलित कहावत है कि 'चार कोस पर पानी बदले और आठ कोस पर बानी', यह इस तथ्य से भी प्रमाणित होता है कि भारत में ही अकेले सोलह सौ बावन से अधिक मातृ बोलियाँ (चौधुरी : 1997)/भाषाएँ आज भी सरकारी तौर पर प्रश्रय प्राप्त हैं और बाईस भाषाएँ संविधान की आठवीं सूची में शामिल हैं। अप्रमाणित तथ्यों से तो यह भी पता चलता है कि पूरे हिंद महाद्वीप में कई हजार बोलियाँ जन-व्यवहार में लाई जाती रही हैं जो अब मॉस-संस्कृति या मॉस-भाषा (Languages of wider circulation) के कारण विनिर्मित भाषाई वातावरण में विलुप्त हो रही हैं या हो गई हैं। इनमें प्रमुख रूप से हिमालयी, उत्तर-पूर्व, अंडमान निकोबार, सुंदरबन, मध्य भारत के आदिवासी क्षेत्रों तथा दूर-दराज क्षेत्रों की बोलियाँ इस विलोपन के प्रभाव से

पीड़ित हैं। पश्चिमी-समाज में जहाँ अनुवाद की भूमिका इस कारण से भी सीमित रही है वहाँ इसे प्रारंभिक दौर में ड्राइडन, जॉन सैम्युल, जॉनसन, सिसरो से लेकर सेंट जेरोम व जेफ्फारी चॉसर और कैथरीन तक ने अनुवाद का उपयोग केवल धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए ही किया। वहीं भारतीय समाज में अनुवाद की परंपरा अथर्ववेद काल से सतत रूप से चली आ रही है। श्रुति, स्मृति, आख्यान, ब्राह्मण, पुराण, उपनिषद्, भाष्य, निर्वचन, निघंटु, आदि (शांता रामकृष्णन : 1997) की परंपराएँ मूलतः भारतीय समाज में संवाद के विभिन्न चरण रहे हैं जो परंपरा से ज्ञान के आदान-प्रदान के साधन के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। यही नहीं लिपिबद्ध होने के पूर्व वैदिक काल में ज्ञान के आदान-प्रदान का माध्यम केवल मौखिक अर्थात् श्रुतिपरक ही था जिसमें शिष्यों को केवल गुरु द्वारा उच्चारित शब्द के श्रवण मात्र से ही अपना ज्ञान प्राप्त करना होता था। जहाँ पश्चिम में अनुवाद को एक विज्ञान के रूप में स्वीकार कर उसके सैद्धांतिक पक्ष को सशक्त किया गया, वहीं यह भारतीय समाज में आदिकाल से ही एक स्वाभाविक प्रक्रिया के अंतर्गत सामान्य दैनंदिन कार्य के रूप में संपादित होता रहा है। हालाँकि जब भारतेंदु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, हरिवंशराय बच्चन तथा राहुल सांकृत्यायन आदि ने अपने लेखन में अनुवाद के सामाजिक एवं भाषिक पक्षों पर ध्यान देते हुए विविध रचनाएँ दीं तो मूल भाषा स्रोत से लक्ष्य तक शब्द यात्रा के पड़ावों के भारतीय भाषाओं के रंग सामने आए जो अपने में अनुवाद की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि का निर्माण करते हैं। रामायण, महाभारत, गीता, पंचतंत्र, गीतांजलि, आयुर्वेद व अर्थशास्त्र आदि के अंतर्भारतीय व विश्व भाषाओं में अनुवाद से जहाँ भारतीय साहित्य की श्रीवृद्धि हुई, वहीं ये ग्रंथ विश्व के सर्वाधिक अनूदित लोकप्रिय ग्रंथों में भी शामिल होकर भारतीय साहित्य को विश्व-बंधुत्व के सेतु निर्माणक के रूप में गौरव प्रदान करते हैं।

राव और पीटर्स के कथनानुसार समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों का यह भी मत है कि मानव समुदाय की मनो-वैज्ञानिकी उनके सामाजिक संबंधों तथा सांस्कृतिक धरोहर के संयुक्त तत्वों का प्रतिनिधित्व करती है और इन्हीं संबंधों से भाषा का जन्म होता है ताकि इन संबंधों और धरोहर को प्रश्रय मिल सके। चूँकि संस्कृति के संरक्षण, वहन व अंतरण हेतु भाषा मुख्य साधन है अतः सभी प्रकार का साहित्य (तकनीकी एवं गैर-तकनीकी) सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में ही लिखा जाता है। यह साहित्य विशेष उद्देश्य से अनुवाद के माध्यम से लक्ष्य समुदाय तक पहुँचाया जाता है। अतः अनुवाद निश्चित रूप से सामाजिक-सांस्कृतिक एकता के विभिन्न आयामों को संपुष्ट करने का महत्वपूर्ण उपागम है।

भारत में जो मातृभाषा की बात कही जाती है वह आनुवांशिकी परंपरा की तारतम्यता

है। अपने लालन-पालन के साथ-साथ शिशु अपने परिवार की संस्कृति, भाषा और अन्य संवाद तंत्रों की जानकारी स्वाभाविक रूप से प्राप्त करता है। एक ही परिवार में तीन से चार विभिन्न संवाद चैनल सामान्यतः देखे जा सकते हैं। एक युवक-युवती अपने दादा-दादी से, माता-पिता से, भाई-बहनों से, सहपाठियों से, गुरुजनों से या फिर आज के कंप्यूटर युग में मोबाइल अथवा इंटरनेट पर अपने मित्रों से बातचीत अथवा संवाद करता/करती है तो न केवल उसका लहजा-इंटोनिंग 'आघात' अलग-अलग होता है, अपितु उसका भाषा विन्यास, शब्दावली और यहाँ तक कि उसका माध्यम भी अलग होता है। यह भारतीय समाज का अनूठा स्वरूप है। यह अनुवाद की एक स्वाभाविक भारतीय परंपरा है। भाषा के अतिरिक्त विभिन्न समाजों में एक ही शब्द के अलग-अलग अर्थ देखे जाते हैं। 'विधवा' के लिए पंजाब में प्रयोग किया जाने वाला शब्द अन्य प्रांतों में गाली का प्रतीक माना जाता है। 'लड़की' के लिए हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सों में प्रयोग किया जाने वाला संबोधन कई जगह अपमान का संबोधन माना जाता है। (डॉ. महीप सिंह : 2006)। कुछ सामान्य शब्द भी जैसे 'समय गुजर गया' जहाँ खुशी से समय काटने का वाचक है वहीं यदि असावधानी से इसका प्रयोग किया जाए तो 'गुजर जाने' का मतलब 'परलोक गमन' भी हो सकता है। इस प्रकार के प्रयोग परिवेश और परंपरा से ही सीखे जाते हैं। भारतीय समाज में शब्द न केवल द्विअर्थी ही हैं अपितु बड़े पैमाने पर भिन्नार्थी भी हैं। इन सभी को सही-सही संदर्भ में जानने के लिए अनुवाद की अपेक्षा बनी रहती है। भाषाविज्ञान में अर्थ, ध्वनि, संकेत-शैली आदि शाखाओं का अध्ययन इन्हीं अंतःभाषिक पहलुओं को समझाने का प्रयत्न होता है। अंतःभाषिक संवाद की जितनी सहजता होगी, विभिन्न समुदायों के मध्य आपसी समझदारी, सौहार्द्र और भाईचारा उतना ही अधिक होगा।

सांस्कृतिक संबंधों की प्रगाढ़ता के लिए भी आवश्यक है कि एक-दूसरे की संस्कृति से परिचय प्राप्त किया जाए, उनकी जीवन-शैली, खानपान और धर्म-दर्शन की भी जानकारी हासिल की जाए। अनुवाद के ये सब प्रकार्य हैं जो समाज में निरंतर सहजता से घटित होते रहते हैं। इसी से मानो अनुवाद भारतीय समाज के मुख्य धरातलों में से एक प्रधान घटक है। सुप्रसिद्ध अनुवाद विज्ञानी और 'दि क्राफ्ट ऑफ ट्रांसलेशन' के रचयिता पीटर न्यूमार्क ने भी अपने 'Cultural word Theory' (सांस्कृतिक शब्द-सिद्धांत) में पारिवेशिक आचार-व्यवहार, शब्द-संपदा, सामाजिक रिश्तों-नातों, उपभोज्य सामग्री, सामाजिक संगठन तथा सांदर्भिक पक्षों को अनुवाद के माध्यम से अंतरित होने वाले तत्वों के रूप में चिह्नित किया है। सामाजिक जीवन का वास्तविक आधार भी आपसी संवाद ही है और बिना संवाद समाज का निर्माण संभव नहीं हो सकता है। प्राचीनकाल से ही यह भी परंपरा

रही है कि यदि किसी को कठोरतम सजा देनी है तो उसे संवाद से वंचित कर दिया जाए। आज भी काल-कोठरियों में अधिकांश बंदी संवाद के अभाव में विक्षिप्त मानसिकता का शिकार हो जाते हैं। अतः आपसी संवाद व्यक्ति एवं समाज की न्यूनतम अनिवार्यता है।

भारत के स्वाधीनता संग्राम के पुरोधाओं ने 1857 की क्रांति और उसके पूर्व के आंदोलनों में जिस माध्यम का प्रयोग किया है वह भी एक प्रकार से अंतर्भाषिक अनुवाद का ही एक रूप था। अपने संकेतों को गुप्त रूप से पहुँचाने के लिए कूट भाषा और एक बोली से दूसरी बोली तथा ब्रितानी शासकों से अपरिचित किसी लिपि का प्रयोग स्वाधीनता संग्राम में अनुवाद की भूमिका को रेखांकित करता है। अनुवाद ने कमोबेश सभी प्रकार के आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है – भले ही वह नवजागरण हो अथवा स्वाधीनता संग्राम। मुगलकाल से भारत में राज्य के संचालन में हरकारों की भूमिका उल्लेखनीय रही है, जब एक स्थान से दूसरे स्थान तक सूचना एवं आदेश के प्रत्यावर्तन हेतु मौखिक और लिखित संकेतों का प्रयोग किया जाता था। आधुनिक सूचना तंत्र जैसी विकसित संचार प्रणाली के अभाव में प्राचीनकाल से ही परंपरागत रूप में विश्व के अनेक भागों में ऊँचे-ऊँचे टीलों पर खड़े होकर अपने संकेतों को दूर तक पहुँचाने का उपक्रम होता रहा है।

शिक्षा नीति 1986 एवं कार्य-योजना 1992 में भी इस बात पर बल दिया गया है कि सभी भारतीय भाषाओं में अंतर्भाषा-अनुवाद अनिवार्यतः किया जाए ताकि न केवल ज्ञान के आदान-प्रदान को प्रशस्त किया जा सके अपितु परस्पर समझ भी बढ़ सके। कुछ लोगों का यह भी मत है कि अनुवाद के माध्यम से बहुभाषिक समाज में विज्ञान शिक्षा को प्रश्रय देने की आवश्यकता के साथ-साथ सभी भाषाओं में वैज्ञानिक जानकारी (साहित्य) का उत्पादन, वितरण व प्रसारण किया जाना अत्यंत आवश्यक है। भारत के भाषाई समाज में एकता के लिए अनुवाद के इस पक्ष को भाषा व विज्ञान नीति के रूप में समेकित करना अपेक्षित होगा। (दुआ : 1997) वैश्विक स्तर पर अनुवाद को राष्ट्रीयता की भावना को बलवती बनाने का भी साधन माना गया है जो साधन रूप में गौण रहकर प्रत्यक्ष अनुवाद के माध्यम से प्रस्तुत साहित्य में संचेतित राष्ट्रीयता का संचार करता है। (बारबरा : 1997)

भारतीय भाषाओं के बीच समांतरता और संवाद की महत्ता देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने लेखन में भी की है। अनुवाद ऐतिहासिक रूप में उन भाषाओं तथा बोलियों को पुनर्जीवन और संरक्षण देने में भी मददगार सिद्ध रहा है जिनके बोलने या लिखने वाले कम हो रहे हैं अथवा जिनका रोजगार अथवा किन्हीं

अन्य कारणों से ह्रास हो रहा है। अनेक महत्वपूर्ण कृतियाँ आज केवल अनूदित रूप में ही उपलब्ध हैं, जबकि अनेक आँचलिक व क्षेत्रीय कृतियाँ इस प्रत्याशा में विलोपन के कगार में हैं क्योंकि उनके प्रयोक्ता वर्ग का ह्रास हो रहा है। इस परिस्थिति में अनुवाद की भूमिका औपचारिक ही नहीं अपितु अनिवार्य भी है। अनुवाद के माध्यम से दुर्लभ साहित्य को संरक्षित करने और उसे पुनर्जीवन देने में भी सहायता मिली है क्योंकि इससे उसके नए पाठक वर्ग का निर्माण होता है जो सक्रियता से उसका उपयोग करता है। प्रो. नामवर सिंह ने भी इस तथ्य पर बारंबार बल दिया है कि एक भाषा में उपलब्ध या लिखे जाने वाले अच्छे साहित्य का भारतीय भाषाओं में अनुवाद करने पर उसका प्रसार होगा तथा पाठक वर्ग बहुत बढ़ जाएगा एवं इससे लेखक-प्रश्रय के साथ साहित्य निर्माण (उत्पादन-मुद्रण) लागत को कम करने में भी सहायता मिलेगी। यह एक अत्यंत व्यावहारिक सुझाव है। इससे ही उस साहित्य विशेष की मांग उत्पन्न होती है। हरियाणा, उत्तराखंड, कुमाऊँ क्षेत्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा देश के अनेक राज्यों में इस प्रकार के कार्यक्रम एवं नीति-निर्णय सरकारों व जनता के मध्य बेहतर संवाद बनाने में उत्तम कारक सिद्ध हुए हैं (देवेंद्र : 2007)। इससे अनेक ख्याति-प्राप्त एवं समृद्ध साहित्यिक रचनाएँ विलुप्त होने से बच गई हैं। भारत भवन, मध्य प्रदेश के इस प्रकार के प्रयास, हिमाचल प्रदेश की कबीलाई संस्कृति (डोडरा क्वार, जॉनसन बाबर व ट्रॉस-गिरी शिलाई क्षेत्र) की काफी धरोहर (साँचा-विद्या जो टाँकरी में लिखी गई है) बचा सके हैं। इसमें 'बैक-ट्रांसलेशन' की एक महत्वपूर्ण भूमिका है जिससे साहित्य संरक्षण व संवर्धन भी होता है। साहित्य के इस प्रकार संवर्धन-संरक्षण में 'बैक ट्रांसलेशन' महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बहु-सांस्कृतिक व बहुभाषिक समाज में आर्थिक अवसरों को लेकर सदैव चिंता बनी रही है कि इसमें डॉमिनेट करने वाला व्यापक भाषा प्रयोक्ता वर्ग ही इन अवसरों का लाभ उठाता है। इसमें भी अनुवाद ने सहजता लाने का प्रयत्न किया है। इससे आर्थिक जगत में अवसरों को नियोजित करने और विभिन्न भाषा-भाषियों के मध्य उन्हें वितरित (योग्य बनाकर) कर अनुवाद लाभ-वंचितों को मुख्य धारा में शामिल करने में सहायक सिद्ध हुआ है। इससे जहाँ जन-असंतोष को कम करने में मदद मिली है वहीं दिग्भ्रमित युवा वर्ग को मुख्यधारा से जोड़ा जा सका है। इस प्रकार के प्रयत्न विशेषकर जम्मू-कश्मीर, उत्तर-पूर्व, मध्य-भारत व दक्षिणी प्रांतों आदि जैसे देश के अनेक हिस्सों में सफल रहे हैं। इन पहलों को मनो-वैज्ञानिकों व राजनीतिशास्त्रियों ने भी उत्तम हल के रूप में स्वीकार किया है। इस प्रकार अनुवाद राष्ट्रीय एकता का प्रमुख सूत्र भी है। अनुवाद इतिहास और संस्कृति के रिश्तों को बनाए रखने का कारक है तथा यह देश को आंतरिक खतरे से बचाने में प्रहरी की भूमिका

भी निभाता है।

अनुवाद ने भारत की राष्ट्रीय एकता में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भाषाई एवं सांस्कृतिक सेतु के रूप में अनुवाद ने विभिन्न विचारधाराओं और भूखंडों को आपस में जोड़ने का कार्य किया है। भारतीय दर्शन, भारतीय साहित्य, भारतीय ज्ञान की परिकल्पना और इसका सामाजिक रूप इसी प्रक्रिया का परिणाम है। विशिष्ट प्रकार के भारतीय परिवेश में नई परिकल्पनाओं, शब्दावलियों एवं भाषिक तत्वों के साथ जीवन सामंजस्य जोड़ता अनुवाद नित-नवीनता का कार्य करता रहा है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में भी साहित्य और चिंतन का आदान-प्रदान कर अनुवाद भारत की नई पहचान बनाने में सफल रहा है। अनुवाद केवल भाषा का परिवर्तन ही नहीं करता है; अपितु यह समाज की पूरी संस्कृति का संवाहक होता है। अनुवादक दो विभिन्न संस्कृतियों के मध्य संपर्क सेतु बनकर उन्हें समान धरातल पर ला देता है क्योंकि भाषाएँ इतनी अपार हैं कि हम उन सभी को नहीं जान पाएँगे। अतः अनुवाद के माध्यम से हम अधिकांश भारतीय और विश्व भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं। इसी से उन तमाम भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान, साहित्य, संस्कृति, सामाजिक और विज्ञान को पाना संभव है। यह अनुवाद ही है जो इस प्रकार स्थानीय समाज को विश्व समाज के साथ जोड़ता है। यही आदान-प्रदान पंडित जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में अनेकता में एकता या मुश्तरका कल्चर है। अनुवाद विश्व संस्कृतियों, महाद्वीपों व राष्ट्रों को आपस में जोड़ता है, और सभी धर्मों, जातियों, देशों व संस्कृतियों की रंगावली भी बनाता है।

ज्ञान की सर्जना और देशज की पहचान, संरक्षण एवं संवर्धन जैसे महत्त-कार्य के जरिए ज्ञान संपदा को समृद्ध-संपन्न करने में अनुवाद का बहुमूल्य योगदान है। वेद, पुराण, महाकाव्य परंपरा, रामायण, महाभारत तथा संस्कृत साहिय का विश्व-भर में प्रचार-प्रसार और उससे ज्ञान परंपराओं की समृद्धि अनुवाद के माध्यम से ही हुई है। पश्चिमी विचारकों-चिंतकों, दार्शनिकों (अरस्तू, सुकरात, प्लेटो, सिसरो) आदि का दर्शन और शेक्सपीयर, दांते, होमर की रचनाओं के सार्वभौमीकरण के कारण हुई साहित्य समृद्धि में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है।

अनुवाद संवाद का निश्चय ही एक ऐसा पहलू है जो यह बताता है कि रचना के लिए भी 'स्पेस' हमेशा बचा रहता है। इस प्रकार अनुवाद भी एक प्रकार की रचना ही है। भाषा प्रवहमान रहते हुए समय और परिस्थिति के अनुसार बदलती रहती है। यह भाषा का वर्धमान गुण है। उसकी भंगिमाओं और तेवरों में भी बहुत कुछ जुड़ता-बनता रहता है। जब किसी भाषा की कोई महत्वपूर्ण क्लासिक कृति सौ-दो सौ साल बाद भी किसी अन्य भाषा से संवाद करना चाहती है, तो उसे एक नए अनुवाद में अवतरित

होकर ही संवाद कायम करना होता है। यह भी कितनी विलक्षण बात है कि मूल कृति मूल ही रहती है, लगभग अपरिवर्तनीय, पर अन्य भाषाएँ उसे यह सुविधा प्रदान करती हैं कि वह नए-नए रूप धारण करती रहे। तो अन्य भाषाओं से अनुवाद के माध्यम से संवाद के लिए आने को हमेशा कुछ-न-कुछ बचा रहता है (प्रयाग शुक्ल : 2009)। भाषाओं के मध्य अनुवाद के सेतु से भूगोल की सीमाएँ तो मिटती ही हैं साथ ही साथ राष्ट्रों के मध्य सांस्कृतिक, आर्थिक और शैक्षिक विकास की प्रक्रिया भी स्थापित होती है। उदाहरण के लिए, केंद्रीय हिंदी संस्थान द्वारा अफगानिस्तान और दूसरे देशों के विद्यार्थियों को हिंदी शिक्षण द्वारा उनके देश की भाषा के साथ जोड़कर नए वैश्विक परिवेश की रचना वास्तव में प्रशंसनीय है।

जॉन हेलिब्रॉन का विचार है कि अनुवाद संस्कृति की समाजशास्त्रीयता में नया संकाय बनकर उभर रहा है क्योंकि इससे विश्व संरचना को समझने में आसानी होती है। संस्कृति, वैश्विक आदान-प्रदान तथा अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के आयामों को विश्लेषित और सूक्ष्मता से परखने के लिए अनुवाद एक शोध विषय के रूप में भी उभरकर सामने आया है। औपनिवेशिक एवं उत्तर-औपनिवेशिक तथा आधुनिक/उत्तर-आधुनिक रचनाओं में अनुवाद एक बड़े राजनैतिक कैनवास के रूप में देखा जाता है जहाँ आर्थिक-सामाजिक पक्ष पर शोषित और शासक का संघर्ष प्रत्यक्ष दिखाई देता है।

संकर वैश्विक स्वरूप में 'भाषिक' और 'सांस्कृतिक' अनुवाद का बृहद् महत्व है। अनुवाद विश्व समुदायों की त्रासद-समस्याओं के समाधान और उनके मध्य संवाद स्थापित कर एक सामाजिक वातावरण का निर्माण भी करता है। विश्व-भर में शरणार्थियों का विस्थापन, उनका पलायन, अन्य देशों में शरण तथा संयुक्त राष्ट्र संघ शरणार्थी पुनर्वासन आयोग (यू.एन.सी.एच.आर.) की तमाम गतिविधियों में संवाद स्थापित कर शरणार्थी समाज की रचनात्मक स्थापना मानव समुदाय हेतु बड़ी सेवा है। काँट की 'वैश्विक आतिथ्य परिस्थिति' का प्रमुख आधार है कि ''सभी लोगों को स्वाभाविक रूप से अस्थायी प्रवास, एक-दूसरे से संबद्ध होने का अधिकार इस धरती पर आने भर से ही प्राप्त है।'' अतः उसका वैश्विक स्तर पर सम्मान ही इस सिद्धांत का महत्वपूर्ण सार है। स्पष्टतः यह वैश्विक व्यक्ति की भाषा-संस्कृति, समाज व मान्यताओं को साँझा कर उनके सही संवाद से ही एक अच्छे वैश्विक समाज की स्थापना की जा सकती है। 'अंतर (विश्व) राष्ट्रीयता' (Trans-Nationality) का ध्येय एक सामंजस्यपूर्ण विश्व-परिवार बनाने से ही पूर्ण होता है। क्रिसन और रिकवर की मान्यताओं के आधार पर विनाका हान का मत है कि अनुवाद निश्चित रूप से सभी को एकसूत्र में पिरोकर संबद्ध करने का कार्य करने के साथ-साथ क्रिसन (1979) की इस उक्ति को भी सार्थक करता है कि 'To Translate

means to Circulate' (अनुवाद परस्पर आदान-प्रदान यानि वितरण करता है) अर्थात् अनुवाद चिंतन को उन्मुक्त धरातल देता है परंतु जो लोग 'Sense of Property' पर विश्वास रखते हैं वे निश्चित रूप से 'Incoming' स्वीकारने-अपनाने से वंचित रह जाते हैं। अतः अनुवाद ही वह एकमात्र विधा है जिसके माध्यम से मनुष्य अपने 'होने को' जैविकीय रूप से शब्द साधन माध्यम द्वारा विलग्नता को संलग्नता में बदल देता है। तात्पर्य यह है कि वह अपने पृथक्कीकृत परिवेश से बृहत् जनसमूह-समुदाय का प्रतिभाजक बन जाता है। (रिकवर 2005)

अनुवाद सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण साधन तो है ही, साथ ही यह 'अपने होने का अहसास' (Sense of Being) को समाज में प्रतिष्ठित करने में सफल रहा है। यदि साहित्य में विमर्श की चर्चा-विधा की स्थापना हुई है तो यह स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श आदि केवल अनुवाद से ही संभव हुआ है, अन्यथा कमजोर या 'हाशिए की आवाज' मात्र 'एक आवाज' बनकर ही रह जाती। परंतु गायत्री स्पिवॉक की धारणा 'अनुवाद एक शक्ति भी है' और तेजस्विनी निरंजना, हरीश त्रिवेदी, सूज़न बेसनेट आदि के औपनिवेशिक एवं उत्तर-औपनिवेशिक संदर्भ में अनुवाद को देख-परखकर उससे उपजी विविध धारणाएँ न केवल उपेक्षित-अलक्षित एवं हाशिए की आवाज को मुखरता दे पाए हैं, अपितु एक सशक्त आंदोलन के रूप में विश्व में नए समाज को नई अवधारणाओं से समांतर धरातल पर सोचने को मजबूर करते हैं। अफ्रीकी, लातिनी अमेरिकी, एशियाई एवं सुदूर प्रशांत महासागरीय देशों और वेस्टइंडीज के भूमध्य सागरीय द्वीपों में एकल पड़े लेखकों की रचनाएँ जब अनूदित हुईं तभी सारे विश्व में यह जागृति आई कि आम आदमी की पीड़ा एकसमान है – वह काला, गोरा या गेहुँआ कोई भी हो। उनकी परिस्थितियाँ, चिंताएँ व अपेक्षाएँ एक जैसी ही हैं। वस्तुतः यह मानसिक धरातल का आदान-प्रदान अनुवाद के माध्यम से ही तो हुआ। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित चीनी लेखक लियु की रचनाएँ तमाम प्रशासनिक बाधाओं और लेखक एवं उसके परिवार की नजरबंदी के बावजूद आज विश्व-भर के मंचों पर विश्व भाषाओं में पढ़ी जा रही हैं। यह एक असाधारण पक्ष है अनुवाद का – व्यक्ति के मानवाधिकारों की सुरक्षा का एक उत्तम साधन।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि जन-मानस के मध्य परस्पर संवाद किसी भी राष्ट्र की मूलभूत आवश्यकता है, और विशेषकर उन राष्ट्रों या समाजों की जिनका सामाजिक ढाँचा भाषाई एवं सांस्कृतिक रूप से बहु-विलक्षणता से भरा हो, जैसा कि भारत का। आपसी संवाद से न केवल आपसी प्रेम, शांति व सौहार्द्र को प्रगाढ़ किया जा सकता है, अपितु देश के आर्थिक संसाधनों का स्थानीय, राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर उत्तम उपयोग भी किया जा सकता है। अनुवाद चूँकि बहुभाषिक एवं बहु-सांस्कृतिक गतिविधि

है, अतः आज महानगरों की समस्याओं के लिए स्थानीय स्तर पर अवसरों का सृजन ज्ञान की विभिन्न शाखाओं को विकसित करके ही किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि अंतर्भाषा संवाद सशक्त एवं अधिक हो, और अनुवाद ही इसका उत्तम विकल्प है। (सच्चिदानंदन : 2011) अनुवाद समाज के आर्थिक संसाधनों के बेहतर उपयोग व समान विवरण के लिए अंतःसंकाय एवं अंतर्संकाय संवाद को बढ़ाने का उत्तम कारक है। वर्तमान समय में यह एक बड़े जॉब-बाजार के रूप में उभर कर सामने आया है। अनुवाद इतिहास, राजनीति, भौगोलिक एवं आर्थिक असमानता की सीमाओं को तर्कसंगत रूप से समझने और उनके सार्थक समाधान के लिए विचार-धरातल की रूपरेखा तैयार करता है। भाषा और संस्कृति किसी भी राष्ट्र की अस्मिता व पहचान होती है। विभिन्न भाषाओं एवं संस्कृतियों वाले राष्ट्र के लिए यह अपरिहार्य है कि आपसी सूझ-बूझ तथा परस्पर सहयोग की भावना सतत विकसित और प्रगाढ़ होती रहे, ताकि समरसता बनी रहे और इस प्रकार का कार्य केवल अनुवाद द्वारा ही संभव है। (इरफान हबीब द्वारा उद्धृत) सर सैय्यद अहमद खाँ ने भी एक स्थान पर लिखा है – जो लोग भारत का विकास चाहते हैं उन्हें यह स्मरण रखना होगा कि इसका सर्वोत्तम उपाय समस्त कला और विज्ञान का अपनी-अपनी स्थानीय भाषाओं में अनुवाद ही होगा। (प्रस्तावना : शांता रामकृष्णा) भारत के भाषिक और सांस्कृतिक संदर्भ में अनुवाद की महत्ता इस तथ्य से भी स्पष्ट होती है कि अनुवाद ही हमारे भाषाई-विवादों, सामाजिक-तनावों और सामाजिक-विकास के दौर तथा बहुभाषिक व्यवहार और सांस्कृतिक अनुभवों में समाहित अतुल्य विरासत को समझाने का एकमात्र साधन है। (चौधुरी : 1997) संभवतः आज के वैश्विक परिवेश में विश्व-नायक गांधी का उदाहरण समीचीन निष्कर्ष होगा कि विचार क्रांति किस प्रकार एक साधारण मानव को विश्व-नायक बना सकती है; और वैश्विक क्रांति का कारक बन सकती है। वैचारिक क्रांति के लिए अनुवाद ने सदैव मुख्य आधार का कार्य किया है। साहित्य, संस्कृति, समाज, मूल्य-विकास कोई भी चर्चा हो, आज के विश्व में मनुष्य विसंपर्कित नहीं रह सकता है। उसमें आचार-व्यवहार, संस्कृति एवं विकास सभी आयामों में वैश्विक नागरिक बनने की जबरदस्त आकांक्षा है। कौन करेगा यह सब? अनुवाद!

क्रोनिन (2003) के इस कथन का उल्लेख यहाँ पर समीचीन होगा कि अनुवाद और वैभिन्नय के मध्य निश्चित संबंध है और मानव जीवन, बोलियों, भाषाओं एवं रीति-रिवाजों तथा जीवन-शैली में प्रतिलक्षित होता है, जब अनुवाद इनकी अभिरक्षा करता है। साथ ही यह हमारी सांस्कृतिक विकल्पनाओं को सतत जीवंत व उपलब्ध बनाए रखता है जिससे कि नवोन्मेषी समाज प्राश्रित होता है। अन्यथा वी. शिवा (1996) की 'Monoculture

of the Mind' की कल्पना के सार्थक होने का डर बना रहेगा क्योंकि एकल-संस्कृति के विध्वंस और विलुप्त होने का खतरा सदैव बना रहता है। क्रोनिन यह भी मानते हैं कि अनुवाद द्वारा 'विभिन्नता' के संरक्षण में 'स्मृति' (Memory) की बहुत अहम भूमिका है क्योंकि यही हमें यह स्मरण रखने में सशक्त करती है कि पूरे विश्व में हमारी तथा अन्य भाषाओं के मध्य कब क्या हुआ, क्या सुना और किया गया। पूर्व को वर्तमान और भविष्य के साथ जोड़ने का साधन है अनुवाद।

स्वाभाविक है अनुवाद मानव मात्र के अस्तित्व को बनाए रखने वाले माध्यमों में महत्वपूर्ण है।

❑

संदर्भ

1. http://en.wikipedia.org/wiki/Society
2. Choudhuri I.N. (1997), 'Plurality of Languages and Literature in Translation'; Translation and Multilingualism in Post-Colonial Contexts, Shanta Ramakrishna (Ed); Pencraft International, Delhi.
3. Dua Hansraj (1997), Science Education and Language Dominance; Translation and Multilingualism in Post-Colonial Contexts, Shanta Ramakrishna (Ed.) Pencraft International, Delhi.
4. Roland Barbara (1997), Culture and Translation; Translation and Multilingualism in Post-Colonial Contexts, Shanta Ramakrishna (Ed.), Pencraft International, Delhi.
5. देवेंद्र उपाध्याय (2007), अनुवाद की सांस्कृतिक और भाषिक विविधता की अनुभूति, अनुवाद, अंक 133, भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली।
6. आरसू (2009), अनुवादक : सांस्कृतिक एकता के संतरी, अनुवाद, अंक 139, भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली।
7. हेमचंद्र पांडे (2006), अनुवाद और महात्मा गांधी, अनुवाद, अंक 126, भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली।
8. गवेषणा (2009), अंक 93, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।
9. अनुवाद बोध (1990), डॉ. गार्गी गुप्त एवं डॉ. पूरनचंद टंडन (संपा.), भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली।
10. सुरेश सिंहल (2006), अनुवाद : अनुभूति और अनुभव (संपा.), संजय प्रकाशन, नई दिल्ली।

11. सुरेश सिंहल (2006), अनुवाद : संवेदना और सरोकार, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली।
12. तसलीमा नसरीन (2005), दुखियारी लड़की (अनुवाद—सुशील गुप्ता), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
13. प्रयाग शुक्ल (2009), हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएँ, समकालीन भारतीय साहित्य, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
14. संस्थान समाचार, जुलाई 2009, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।
15. Jean Peeters and J. Prabhakar Rao : Why do we need now Socio-Cultural Approaches to Translation; Socio-Cultural Approaches to Translation : Indian and European Perspectives, Ed. J. Prabhakar Rao & Jean Peeters : Excell India Publishers, New Delhi.
16. Gyatari C. Spivak : The Politics of Translation, Translation from Periphery to centre stage, Ed. Tutun Mukharjee, 1998, प्रेस्टिज बुक्स, नई दिल्ली।
17. संपादकीय, अनुवाद, अंक 63 (1990-अप्रैल से जून), भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली।
18. Khullar K.K. (1990), Reflections of Culture through Translation; अनुवाद, अंक 63, भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली।
19. Binnaca One-Han, Translation tool in the process of Cultural Globalization; Translation Directory com.
20. Moria Inghlleri, Interpreting Justice in Global Context, Critical Readings in Translation, Ed. Mona Baker, Routeledge : London, 2010.
21. John Heilbron; book system as Cultural World System, Critical Readings in Translation, Ed. Mona Baker, Routeledge : London, 2010.
22. K. Satchidanandan, Translation – its Role and Scope in India, Digital Learning, Vol 07, March 2011, New Delhi.
23. Cronin Michael, Translation and Globalization, 2006, Routeledge : London, (Digitized 2006)

प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी

विज्ञापन और उसका अनुवाद

जनसंचार के क्षेत्र में विज्ञापन की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसका संदर्भ तो व्यावसायिक है, किंतु माध्यम जनसंचार है क्योंकि वाणिज्यिक और व्यावसायिक दोनों क्षेत्रों के संवर्धन के लिए विज्ञापन जनमत तैयार करता है। इसीलिए आज के प्रचार माध्यम की भाँति यह भी एक सशक्त माध्यम है, जो व्यावसायिक और औद्योगिक क्षेत्रों में उनकी उत्पादन संबंधी मांग-वृद्धि और नए उत्पादों की जानकारी उपभोक्ता तक निरंतर पहुँचाने तथा विक्रय में वृद्धि करने का काम करता है। इसके अतिरिक्त यह प्रतिष्ठान के प्रति उपभोक्ताओं तथा जनता में रुचि और विश्वास पैदा करने में सहायक होता है।

विज्ञापन का मुख्य प्रयोजन उत्पादन की बिक्री कराना है। इसके माध्यम से अधिकतर लोगों तक वस्तु या सेवा का नाम और उसकी उपयोगिता तथा गुणावगुण के बारे में बताया जाता है, इसलिए उसकी भाषा भी विशिष्ट प्रकार की होती है। इसका प्रयोग विभिन्न प्रयोजनों के लिए होता है। हिंदी जनसंचार के क्षेत्र में यह एक स्वतंत्र प्रयोजनमूलक भाषा के रूप में पनप रहा है। आज इसका क्षेत्र भी व्यापक होता जा रहा है। इसकी अपनी शब्दावली और अपनी वाक्य-संरचना है। विज्ञापन के क्षेत्र के अंतर्गत न केवल उत्पादक और उपभोक्ता आता है,बल्कि इस क्षेत्र से संबंधित जनसंचार के सभी माध्यम और यातायात के साधन भी आते हैं, जो विज्ञापन के प्रसार में सहायक होते हैं। इस दिशा में राष्ट्रीय स्तर पर 'युनी ऐड्स', 'सविता ऐड्स' जैसी स्वैच्छिक विज्ञापन एजेंसियाँ कार्य कर रही हैं, जबकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध विज्ञापन समितियाँ अन्य देशों की विज्ञापन समितियों से सह-संबंध स्थापित कर विज्ञापनों का वितरण कर रही हैं।

विज्ञापन व्यावसायिक क्षेत्र का एक अभिन्न अंग होने से इसमें व्यावसायिक क्षेत्र की शब्दावली का प्रयोग अधिकाधिक हो रहा है। दैनिक पत्रों में 'बिकाऊ है', 'आवश्यकता है', और 'अपार भीड़ आकर्षित कर रहा है', 'भव्य समारोह' आदि वाक्य विज्ञापन की

भाषा के रूप में प्रयुक्त हो रहे हैं।

विज्ञापन में जितना महत्व विज्ञापन-सामग्री का होता है, उतना ही महत्व भाषा का भी होता है। हिंदी भाषा के प्रयोग को विज्ञापन में देखा जा रहा है, जिसके लिए पत्र-पत्रिकाओं, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन पर प्रयुक्त हिंदी को आधार बनाया गया है। ब्रिटिश विद्वान जेफ्रे लीच ने अंग्रेजी भाषा के विज्ञापन का अध्ययन एक विशेष शैली के रूप में स्वीकार करते हुए उसके लिए चार वाँछित गुणों की चर्चा की है। वे इस प्रकार हैं :

1. आकर्षक तत्व
2. श्रव्यता तथा सुपाठ्यता
3. स्मरणीयता
4. विक्रय की शक्ति

ये सभी गुण अंग्रेजी विज्ञापन के संदर्भ में स्थिर किए गए, किंतु इन्हें हिंदी विज्ञापनों के संदर्भ में भी लागू किया जा सकता है :

1. आकर्षक तत्व : आकर्षण विज्ञापन की प्रमुख अनिवार्यता है। यह आकर्षण ही विज्ञापन को सही व्यक्ति तक पहुँचाता है। आकर्षण के लिए अनिवार्य है, विज्ञापन की विषय-वस्तु संक्षिप्त, पूर्ण और सहज भाषा में हो। इन अनिवार्य गुणों को शीर्ष पंक्तियाँ, विस्तृत जानकारी, नारे आदि देते समय ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

हिंदी विज्ञापनों में आकर्षण का तत्व उत्पन्न करने के लिए अनेक प्रकार की वाक्य संरचनाओं का प्रयोग करते हैं, जिनसे विज्ञापन की प्रभावशीलता में वृद्धि होती है – 'सहयोग के लिए धन्यवाद' (जीवन बीमा निगम), 'परिवार के लिए माँ की पसंद' (डालडा)। इसके लिए प्रायः विज्ञापनों में 'और', 'क्योंकि', 'सिर्फ', 'जरा-सा', 'अब आप समझे', 'आजमाइए', जैसी अभिव्यक्तियों का और 'न ध्यान दें' जैसे निर्देशात्मक वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार की विज्ञापनी शब्दावली का प्रयोग करने से उत्पाद वस्तु की विशेषता को व्यक्त किया जाता है। इनके उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं।

(अ) और, क्यों, सिर्फ आदि का प्रारंभिक प्रयोग

क. **और सिर्फ : और** नेसकैफे अब नए प्रयोग में।

ख. **क्योंकि : क्योंकि** इसमें सफेदी की ताकत अधिक है।

ग. **सिर्फ : सिर्फ** प्रॉमिस ही लौंग युक्त तेल है।
तकलीफ से आराम **सिर्फ एक** सेरिडॉन।

घ. **सिर्फ : सिर्फ** सर्फ (सर्फ पाउडर)।

(आ) अन्य अभिव्यक्तियाँ

क. **'क्यों प्रश्नवाचक का प्रयोग :** अब आप समझे मैंने यह टिकिया **क्यों** ली। (रिन साबुन)

ख. **कहीं-कहीं सुझावात्मक अभिव्यक्तियाँ भी मिलती हैं :** हमेशा माँगिए, आज ही पधारिए, खुद आजमाइए, शक्ति पाइए, चुस्त रहिए, सेरिडॉन लीजिए।

ग. **कुछ विज्ञापनों में उत्पाद के बारे में सूचना होती है :** हॉर्लिक्स ज्यादा शक्ति देता है, क्लिअरसिल मुँहासे को खोलता है, उन्हें साफ करता है, दूर करता है।

घ. **आकर्षण लाने के लिए प्रश्नसूचक अभिव्यक्तियाँ दी जाती हैं :** सरदर्द से परेशान? इससे लाभ? अब आप क्या करेंगे?

ङ **कुछ अभिव्यक्तियाँ विस्मयादिबोधक प्रधान होती है :** वाह ताज!

2. श्रव्यता तथा सुपाठ्यता : विज्ञापनों में कवितामयी भाषा अथवा गीतों के रूप में भाषा का प्रयोग होता है और संगीत का भी इसमें समावेश होता है। इससे विज्ञापन अत्यंत श्रव्य और रोचक हो जाते हैं। इस प्रकार के विज्ञापन आकाशवाणी तथा दूरदर्शन जैसे जनसंचार के माध्यमों द्वारा प्रसारित किए जाते हैं। मुद्रण माध्यम द्वारा दिए जाने वाले विज्ञापनों में सुपाठ्यता लाने के लिए सुंदर, सुडौल और विभिन्न आकृतियों द्वारा दिए जाने वाले विज्ञापन की भाषा सरल और सुबोध होती है। उदाहरण के लिए :

(क) वीको वज्रदंती।
आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियों को
वीको ने अपनाया
जो दाँत की रक्षा करे (वीको)

(ख) सरदर्द हटाए – मुस्कान जगाए (ऐस्प्रे)

(ग) साफ ताजा साँस, मजबूत स्वस्थ दाँत (कॉलगेट)

(घ) लक्स शुद्ध और सौम्य है (लक्स)

(ङ) सुपर रिन की चमकार ज्यादा सफेद (रिन)

3. स्मरणीयता : बच्चों से वृद्धों तक के सभी वर्गों के ग्राहकों के लिए उत्पाद वस्तु के ब्राँड को या उत्पाद वस्तु को सदा याद रखने की दृष्टि से भाषा का प्रयोग विज्ञापनों में नारे के रूप में किया जाता है। ये नारे छोटे-छोटे सरल वाक्यों में रोचक तथा वस्तु के नाम को याद रखने के लिए होते हैं। उदाहरण के लिए :

(क) आई लव यू रसना (रसना)

(ख) ताजा माँगो, माजा माँगो (माजा)

(ग) खाओ गगन, रहो मगन (वनस्पति घी)

(घ) तंदुरुस्ती है जहाँ, लाइफ ब्वॉय है वहाँ (लाइफ ब्वॉय साबुन)

4. विक्रय शक्ति : इस प्रकार विज्ञापन के क्षेत्र में संप्रेषणीयता और आकर्षण का होना आवश्यक है। इसके लिए विज्ञापन लेखक एक सृजनशील कलाकार की भाँति

विज्ञापन के विषय को सृजनात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। यह एक ऐसा कलात्मक कौशल है, जिसके भीतर वस्तु या उत्पाद के विक्रय की प्रेरणा मिलती है। विक्रयशक्ति की यह क्षमता विज्ञापन की संप्रेषणीयता में निहित रहती है; जैसे – गोली एक एक्शन दो, खुशखबरी..., अफसोस! यह ऑफर आज तक ही है, जवाब नहीं..., क्या आप जानते हैं...?

विज्ञापन की शैलियाँ

भाषा में विभिन्न प्रकार की विविधताएँ काल-विशेष, स्थान-विशेष, समाज-विशेष, विषय-विशेष, प्रयोजन-विशेष, व्यक्ति-विशेष, विधा-विशेष जैसे अनेक आयामों और संदर्भों में दिखाई देती हैं। विषय-विशेष और व्यक्तिपरक संबंधों के आधार पर भाषा की पाँच शैलियाँ मानी गई हैं – रूढ़िपरक, औपचारिक, अनौपचारिक, सामान्य तथा अंतरंग। सरकारी विज्ञापन प्रायः रूढ़िपरक, औपचारिक और सामान्य शैली में होते हैं। गैर-सरकारी विज्ञापन भी प्रायः रूढ़िगत, औपचारिक और सामान्य होते हैं, लेकिन स्वास्थ्य संबंधी जैसी कुछ सूचनाएँ अनौपचारिक भी हो जाती हैं। रोजगार आदि की सूचनाएँ मुख्यतः इन शैलियों के अंतर्गत प्रकाशित होती हैं। व्यावसायिक विज्ञापन प्रायः औपचारिक, सामान्य, अनौपचारिक और अंतरंग शैली में होते हैं, जिनमें अनौपचारिक और अंतरण शैली प्रमुख होती है।

विज्ञापन की भाषिक संरचना के अंतर्गत ध्वनियों या वर्तनी का विवरण आकर्षक ढंग से होता है; जैसे – शर्ट्स-ट्राउजर (ब्ल्यू चिप) के विज्ञापन के लेखन में अक्षरों को अलग-अलग देकर चमत्कार पैदा करना होता है। इसके साथ ही विज्ञापन के विविध विषय भी आवश्यकता के अनुसार तत्सम (संस्कृतनिष्ठ), देशज, विदेशी (अंग्रेजी, अरबी-फारसी) आदि शब्दावली का प्रयोग होता है। कहीं-कहीं मिश्रित शब्दावली भी पाई जाती है। उदाहरण के लिए :

(क) मधु, द्राक्षा व अधिक केसर से समृद्ध (च्यवन प्राश)

(ख) जाँबाज कामकाजी मर्दों के लिए (पामोलिव शेव और ब्रश)

(ग) लिव लाइफ किंग साइज (फोर स्क्वेयर)

हिंदी विज्ञापनों में भाषा को आकर्षक और रोचक बनाया जाता है। इसमें निश्चयवाचक, विरोधवाचक, आदेशात्मक और विवेचनात्मक वाक्य दिए जाते हैं, जो अर्थबोध और संप्रेषण करने में पूर्णतया सहायक होते हैं; उदाहरण के लिए :

(क) मैंगो फ्रूटी, फ्रेश एन जूसी (फ्रूटी)

(ख) इस आग को बुझाने के यंत्र की बनावट में बस एक बात का ध्यान नहीं रखा गया – आग का (यूरीरोलेटर)

(ग) अब लीजिए शक्तिशाली टर्बो आवाज (वीडियोकॉन)

(घ) कहा बहुत कुछ
जा सकता है
बिना एक भी
शब्द कहे (केयो कार्पिन)

विज्ञापन जनसंचार का एक अंग होते हुए भी औपचारिक, व्यावसायिक और सामाजिक सेवा में अपना विशेष महत्व बनाए हुए है। विज्ञापन की प्रकृति तकनीकी, अर्ध-तकनीकी और अतकनीकी तीनों होती है और इसी के अनुसार इसकी भाषा लिखित और मौखिक रूपों में होती है। इसमें निहित संप्रेषणीयता, प्रभावोत्पादकता, रोचकता और प्रेरक-शक्ति व्यवसाय को समृद्ध और उन्नत बनाती है।

विज्ञापन का अनुवाद

विज्ञापन लेखन जितना कठिन काम है; विज्ञापनों का अनुवाद भी उतना ही जटिल है। मूल विज्ञापन का जो उद्देश्य होता है, उसे यथावत् रखना ही अनुवादक का लक्ष्य होता है। उसकी दृष्टि संदर्भ और विषय के अनुरूप बदलती रहती है। वास्तव में विज्ञापन का क्षेत्र काफी व्यापक है। इसका संबंध अपने विज्ञापन क्षेत्रों से है, लेकिन इसमें संप्रेषणीयता और रोचकता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। किसी भी उत्पाद-वस्तु, सेवा या सूचना की जानकारी कितनी भी महत्वपूर्ण है, किंतु यदि वह संप्रेषणीय न हो तो वह अपना प्रभाव नहीं छोड़ पाता। अनुवाद में भी उपभोक्ता तक संप्रेषित करने की क्षमता का होना अनिवार्य है। इसमें अनुवाद कम, अनुसृजन की अधिक अपेक्षा रहती है। इसमें प्रायः मूल पाठ के कथ्य पर अधिक ध्यान दिया जाता है, वाक्य-योजना और शब्द संयोजन पर कम। अतः अनुवादक विषय के अनुसार शब्दानुवाद, भावानुवाद या अनुसृजन करता है ताकि विज्ञापन में निहित संदेश का संप्रेषण पूर्णतया हो सके।

विज्ञापन मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं – एक संस्थागत विज्ञापन और दूसरा वाणिज्यिक विज्ञापन। इन दोनों के आधार पर अनुवाद की शैलियों और प्रकारों की अपेक्षा रहती है।

1. संस्थागत विज्ञापन : संस्थागत विज्ञापन राष्ट्रीय हित संबंधी तथा चेतावनीपरक विज्ञापन होते हैं, जो सरकारी, अर्ध-सरकारी तथा स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा प्रेषित किए जाते हैं। इनके अतिरिक्त सामाजिक मामलों, चिकित्सा संबंधी सूचनाएँ, परिवार नियोजन, जन-कल्याण संबंधी घोषणाओं, रोजगार, नियुक्ति, निविदाओं आदि की जानकारी और सूचना भी इसी विज्ञापन द्वारा दी जाती है। इस प्रकार के विज्ञापनों की शैली अधिकतर रूढ़िपरक, औपचारिक अथवा सामान्य होती है और इनका प्रायः शाब्दिक अनुवाद होता है। उदाहरण के लिए क्रेडिट कार्ड के बारे में निम्नलिखित सूचना देखिए :

State Bank of India

Credit Card offers both
Advantages and **Problems**
Thankfully you can select either

Educational Compaign : A Special initiative by SBI
Use credit cards to your advantage.

Credit cards are extremely convenient and safe while travelling. When used smartly, they offer many benefits like interest-free purchases, cash back, protection to purchases and more. However, continuously paying late can put you in bad-debt.
situation So :

* Select credit cards with the lowest interest rates
* Never use them to cover shortfall in income
* pay your credit cards bills on time
* Always remember to read all terms and conditions

SBI is not responsible and disclaims any liability for actions/decisions based on the above.

भारतीय स्टेट बैंक

क्रेडिट कार्ड में

फायदे भी हैं और **नुकसान** भी
मुश्किल यह है कि आप कोई एक नहीं चुन सकते।

एजुकेशनल कैम्पैन : एसबीआई की एक खास पहल
अपने फायदे के लिए क्रेडिट कार्ड प्रयोग करें

यात्रा के दौरान क्रेडिट कार्ड बहुत सुविधाजनक और सुरक्षित माध्यम है। होशियारी से इस्तेमाल करने पर यह ब्याज-मुक्त खरीद, कैश बैक, खरीद की सुरक्षा आदि प्रदान करते हैं। हालाँकि, लगातार विलंब भुगतान से आप कर्ज में डूब सकते हैं, इसलिए :

* सबसे कम ब्याज दर वाला क्रेडिट कार्ड चुनें
* इनका प्रयोग आय की कमी पूरी करने हेतु न करें
* अपने क्रेडिट कार्ड के बिल समय पर अदा करें
* सभी नियम व शर्तें हमेशा पढ़ लें

उपरोक्त के आधार पर किए गए किसी कार्य/निर्णय के लिए एसबीआई जिम्मेदार नहीं है और उनके प्रति किसी दायित्व को अस्वीकार करती है।

उपर्युक्त अनुवाद में तत्सम, तद्भव, देशज, अरबी-फारसी और अंग्रेजी की शब्दावली मिलती है। इसमें कई शब्दों का अनुवाद नहीं किया गया, जैसे – एजुकेशनल कैम्पैन। इसमें औपचारिक शैली का प्रयोग हुआ है। वस्तुतः संस्थागत अनुवाद में संप्रेषणीय, बोधगम्यता और प्रवाहपूर्ण तो होते हैं, किंतु उनमें सर्जनात्मकता और साहित्यिकता का प्रायः अभाव रहता है। इसीलिए ऐसे अनुवाद में प्रभावोत्पादकता और रोचकता की अपेक्षा कम की जाती है।

वाणिज्यिक विज्ञापन : ये विज्ञापन प्रायः वाणिज्यिक संस्थाओं, गैर-सरकारी कंपनियों, निर्माताओं आदि द्वारा जारी किए जाते हैं, जिनमें इनके अपने उत्पादों, वस्तुओं आदि का प्रचार-प्रसार होता है। इसलिए जन-सामान्य को आकर्षित करने के लिए वाणिज्यिक विज्ञापनों में रुचि पोषण होता है। इनमें श्रव्यता और सुपाठ्यता होती है। इनमें प्रायः बोले हुए स्वरूप का अधिक ध्यान रखा जाता है। इसमें लय, छंद, अलंकार, तुकबंदी आदि का प्रयोग काफी होता है। इसीलिए इस प्रकार के विज्ञापनों में भावानुवाद और अनुसृजन का विशेष महत्व रहता है। उदाहरण के लिए;

(क) Discover a new fairness, emerge gently and naturally. (फेयर एंड लवली)
जगाइए एक नया निखार, कोमलता से, कुदरती तरीके से।

(ख) Trust has so many reasons. (गोदरेज)
भरोसे के पीछे हैं कारण अनेक।

कई बार शब्दानुवाद से बात नहीं बनती। कुछ श्लेषयुक्त अभिव्यक्तियाँ होती हैं, जिनका अनुवाद या तो संभव नहीं होता या निरर्थक, अस्पष्ट और दुर्बोध हो जाता है। अतः मूल पाठ में श्लेष के रूप में जो अलंकार मिलता है, उनका आलंकारिक अनुवाद करने का मोह त्यागना पड़ता है। ऐसे में सीधे-सादे लेकिन संप्रेषणीय अनुवाद से भी काम चलाना पड़ता है। बैंक, बीमा, उपक्रम आदि की पंचलाइनों या नारों (catch word) का शब्दानुवाद करना पड़ सकता है, किंतु उसके सौंदर्य में बाधा नहीं आ पाती। उदाहरण के लिए;

(क) The bank you can bank upon (Punjab National Bank)
आपके भरोसे का बैंक।

(ख) Dunlop is Dunlop (डनलप टायर)
डनलप तो लाजवाब है।

उपर्युक्त दोनों विज्ञापनों में 'बैंक' और 'डनलप' शब्दों में श्लेष है। अतः बैंक के दो अर्थ हैं – 'बैंक' और 'भरोसा'। इसी प्रकार 'डनलप' के भी दो अर्थ हैं –

'डनलप टायर का नाम' और 'लाजवाब'। इनमें समध्वन्यात्मक शब्द तो नहीं आए जो मूल पाठ अंग्रेजी में हैं, लेकिन इनके अन्य अर्थों से काम चलाना पड़ा। तथापि, हिंदी अनुवाद अपने आप में सुंदर बन पड़ा है।

कई बार विज्ञापन के शीर्षक पंचलाइन या नारे के रूप में होते हैं और उनका सर्जनात्मक अनुवाद मूल पाठ से अधिक आकर्षक और रोचक होता है। ऐसा लगता है, वह अनुवाद अनुवाद नहीं, नई रचना है। वी.आई.पी. सूटकेस और एयरफोर्स बंपर रैफल के अनुवाद द्रष्टव्य हैं :

(क) The Happy Holiday line from VIP (VIP Suitcase)
वी.आई.पी. के तीन हमसफर,
खूबियों में एक से एक बढ़ कर।

(ख) Why settle for less,
it is a rich bargain.
सौ चोट सुनार की,
एक चोट लोहार की।

विज्ञापन के अनुवाद में सरल और सुबोध भाषा की अपेक्षा रहती है। इसमें छोटे वाक्यांशों का प्रयोग सौंदर्य और ओजस्विता लाता है। इसमें सुपाठ्यता का गुण होना इसकी विशेषता है। इसके लिए अनुवादक को विज्ञापन के सामाजिक संदर्भ और उद्देश्य का ज्ञान होना अपेक्षित है। उपभोक्ता के वर्ग, समुदाय, लिंग, आयु आदि को ध्यान में रखकर अनुवाद करना आवश्यक है; जैसे –

(क) You can't beat Bajaj (बजाज स्कूटर)
बजाज का मुकाबला नहीं।

(ख) Neighbour's envy, owner's pride (ओनिडा टी.वी.)
पड़ोसियों की जले जान, आपकी बढ़े शान।

(ग) You have got a good thing going (हीरो होंडा स्कूटर)
आपका शानदार हमसफर।

(घ) Virtually indestructible (पूमा प्लाई)
(i) वस्तुतः अविनाशी,
एक अन्य अनुवाद भी हो सकता है :
(ii) जीवन भर साथ निभाए।

(ङ) Radiance, you see it I feel it (लक्मे साबुन)
दमक, हम पर लिखी, सबको दिखी।

(च) Who's afraid of birth days (पांड्स क्रीम)
उम्र से क्या घबराना।

(छ) Hourly chimes (एच.एम.टी. घड़ी)
हर घंटे सुहानी घंटी।

विज्ञापन के अनुवाद में आकर्षण लाने के लिए कभी तत्सम, कभी तद्भव, कभी देशज, कभी अंग्रेजी और कभी उर्दू की शब्दावली प्रयुक्त होती है, जो भाषा में सरसता, सहजता और सुबोधता लाती है। अंग्रेजी के कुछ शब्दों के उदाहरण दिए जा रहे हैं :

refreshing	⇒ ताजगीदायक	charming	⇒	आकर्षक
tasteful	⇒ ज़ायकेदार	graceful	⇒	सौम्य
durable	⇒ टिकाऊ	even-toned (skin)	⇒	रेशमी त्वचा

कई बार निजी और गैर-सरकारी कंपनियों के मूल विज्ञापन अंग्रेजी में लिखे जाते हैं और फिर उनका अनुवाद हिंदी में होता है, जिनकी भाषा में सरलता और स्पष्टता होती है। उपभोक्ताओं को बाँधने के लिए इसमें सर्जनात्मक भाषा का प्रयोग होता है। जिसमें लक्ष्य भाषा की एक विशिष्टता दिखाई देती है। यह ध्यातव्य है कि कई बार विज्ञापनों में सर्जनात्मक अनुवाद मौलिक से भी अधिक सक्षम और प्रभावकारी होता है। उदाहरण के लिए;

(क) **Ponds**
Look and feel young at any age ⇒ लगिए और दिखिए जवाँ किसी भी उम्र में।

(ख) **Nihar Coconut Oil**
A cool & stress soothing experience ⇒ उफ् उलझन! एक शीतल और शांत अहसास।

(ग) **Lux**
Which one is yours? ⇒ इनमें कौन सा है आपका?

(घ) **Tu Tu main main**
Will they bridge the gap? or Won't they? ⇒ जमीं-आसमाँ! मिलेंगे? या नहीं?
To find out watch Tu Tu main main ⇒ जानने के लिए देखिए तू तू मैं मैं।

(ङ) **Vasmol Kesh Kala Tel**
Go on. Guess my age! ⇒ बोलो, क्या है मेरी उम्र?

उपभोक्ताओं या ग्राहकों को अपनी ओर खींचने तथा विक्रय शक्ति बढ़ाने के लिए

उत्पादकों और विज्ञापनदाताओं में होड़ सी लगी है। इसलिए स्रोत भाषा में वे आकर्षक, रोचक, संक्षिप्त, मनमोहक, सर्जना-शक्ति से परिपूर्ण विज्ञापन प्रकाशित करते हैं और लक्ष्य भाषा में इसको बरकरार रखने की जिम्मेदारी अनुवादक पर आती है। इस सौंदर्य को यथावत् अनुवाद में लाना ही अनुवादक का कौशल है, जैसे –

(क) Thums-up :
Taste the thunder ⇒ थम्स अप, तूफानी ठंडा।

(ख) Beautiful, beautiful fresca ⇒ सुंदर, सुहाना फ्रेस्का।
Beautiful fragrance of fresca ⇒ खुशबू का खजाना फ्रेस्का।

(ग) I feel soft and silky and
woman all over ⇒ मैं नारी रेशम रेशम मेरा अंग अंग रेशम रेशम।

(घ) Rin strikes whitest in
just one wash! ⇒ सफेदी की चमकार सिर्फ एक धुलाई में।

सभी विज्ञापन एक ही प्रकार से या समान उद्देश्य पूरा करने वाले नहीं होते। इनमें कुछ तथ्यात्मक, कुछ सर्जनात्मक और काव्यात्मक, कुछ संवेदनात्मक और कुछ मात्र आवृत्ति के कारण प्रभावकारी होते हैं। ऐसे विज्ञापनों के अनुवाद में अनुवादक को भाषा के विभिन्न स्तरों से गुजरना पड़ता है, किंतु इसमें दो मत नहीं कि वाणिज्यिक विज्ञापनों का अनुवाद प्रायः अनुवाद नहीं होता वरन् अनुसृजन होता है, जो विज्ञापनों में जान डाल देता है। वे अनुवाद कभी-कभी मूल लेखन से भी अधिक, सुंदर, सर्जनात्मक और साहित्यिक होते हैं। यहीं पर अनुवाद कला है, कौशल है, जो मूल विज्ञापन जैसी मौलिकता, प्रवाह और लय प्रस्तुत कर अनूदित विज्ञापन को प्रभावोत्पादक, रोचक और संप्रेषणीय बनाता है।

❑

डॉ. सत्येंद्र सिंह

पारिभाषिक तथा तकनीकी शब्दावली

भाषा मानवीय भावों एवं विचारों के अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। भाषा में वाक्य संरचना की दृष्टि से सबसे बड़ी इकाई है और भाव अभिव्यक्ति की लघुतम इकाई भी है। वाक्य सार्थक एवं अनुशासित शब्दों का एक व्यवस्थित समूह है जिसमें एक समापिका क्रिया अवश्य मौजूद होती है और इसी के माध्यम से व्यक्ति अपना अभिप्राय स्पष्ट करता है।

उपवाक्य वाक्य से छोटा तथा पदबंध उपवाक्य से छोटा घटक है। पदबंध एक शब्द का भी हो सकता है और अधिक शब्दों का भी। इस तरह शब्द भाषा की लघुतम, स्वतंत्र सार्थक इकाई को कहते हैं। मोटे तौर पर शब्द दो प्रकार के होते हैं – सामान्य शब्द और पारिभाषिक शब्द। सामान्य शब्द आम बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले शब्द को कहते हैं। पारिभाषिक शब्द उन शब्दों को कहते हैं जिनकी अर्थ सीमा को बाँधते हुए उनका एक निश्चित अर्थ तय कर दिया जाता है। पारिभाषिक शब्द, जैसा कि इसकी परिभाषा से भी स्पष्ट है, वे शब्द हैं जो किसी विषय विशेष, प्रसंग अथवा संदर्भ में प्रयुक्त होते हैं।

पारिभाषिक/तकनीकी शब्दावली का अर्थ और परिभाषा

अंग्रेजी के 'Technical Terminology' पद के लिए हिंदी में 'पारिभाषिक शब्दावली' पद का प्रयोग होता है। 'Technical' शब्द के लिए हिंदी में दो पर्याय प्रचलन में है – पारिभाषिक और तकनीकी। अंग्रेजी का 'Technical' शब्द 'Technique' से बना है, जो वस्तुतः ग्रीक भाषा के 'Technika' शब्द से आया है। ग्रीक भाषा में 'Technika' शब्द का अर्थ है – किसी चीज के बनाने या तैयार करने की कला अथवा शिल्प। अंग्रेजी शब्दकोशों के अनुसार 'Technical' का अर्थ है – Of a particular art, science, craft or about art अर्थात् विशिष्ट कला, विज्ञान तथा शिल्प विषयक या विशिष्ट कला के बारे में।

विद्वानों के अनुसार ''ऐसे शब्द जो सामान्य व्यवहार की भाषा में प्रयुक्त न होकर ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में विषय एवं संदर्भ के अनुसार विशिष्ट किंतु निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होते हैं उन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं।''

ऐसे शब्दों को सामान्य व्यक्ति तब तक समझ नहीं सकता जब तक कि उसे उस विषय क्षेत्र का ज्ञान न हो। उन्हें पारिभाषित करना पड़ता है। विज्ञान शब्द को स्थिर कर देता है और भाषा शब्द को अर्थ प्रदान करती है।

तकनीकी शब्दों के प्रकार

मनुष्य सामान्य जीवन में जिन शब्दों का प्रयोग करता है उनसे भिन्न कुछ ऐसे शब्द भी होते हैं, जिनका प्रयोग वह केवल ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में करता है। इन शब्दों और उसमें निहित अर्थों का परिचय तभी होता है जब विषय विशेष का अध्ययन किया जाता है। हिंदी साहित्य पढ़ने पर ही 'छायावाद', 'प्रगतिवाद', 'प्रयोगवाद' 'रस' आदि की जानकारी होगी। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में एक विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त होने वाले यही शब्द पारिभाषिक शब्द हैं। जिस भाषा में ज्ञान-विज्ञान का जितना अधिक विकास होता है, उसमें पारिभाषिक शब्दों की संख्या उतनी ही अधिक होती है। अंग्रेजी में पारिभाषिक शब्द हैं। अतः अंग्रेजी में प्रयुक्त होने वाले पारिभाषिक शब्दों का भारतीय रूप भी स्थिर करने पर भारतीय भाषाओं की शब्दावली को भी समृद्ध बनाया जा सकता है। शब्दों के संरचना, उद्‌भव और प्रयोग के आधार पर तीन भेद होते हैं :

1. सामान्य शब्द
2. अर्थ पारिभाषिक शब्द
3. पारिभाषिक/तकनीकी शब्द

1. सामान्य शब्द : ऐसे शब्द जिनका प्रयोग आम व्यक्ति सामान्य बोलचाल की भाषा में बड़ी संख्या में करता है। यथा – किताब, कलम, घर, रोटी, कपड़ा, चाकू, खाना, पीना, चलना, मेज इत्यादि सामान्य शब्द हैं। सरलता, सहजता, एकार्थता, बहुप्रयुक्तता आदि सामान्य शब्दों के गुण हैं। ये पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयोग नहीं किए जा सकते हैं।

2. अर्ध-पारिभाषिक शब्द : सामान्य शब्दों के अतिरिक्त कुछ ऐसे शब्द भी होते हैं, जिनका प्रयोग स्थिति, विषय-वस्तु तथा संदर्भ के अनुसार सामान्य तथा पारिभाषिक, दोनों प्रकार के शब्दों के रूप में होता है। इनकी पहचान थोड़ा मुश्किल होती है। इन्हें विशिष्टता या विशेष संदर्भ में प्रयोग के आधार पर ही पहचाना जा सकता है। जैसे – 'वेदना' शब्द सामान्य पीड़ा के लिए प्रयुक्त होता है और दर्शनशास्त्र में परमब्रह्म से जीव के अलगाव की विशेष स्थिति के लिए भी। इस प्रकार बोलचाल की भाषा में यह सामान्य शब्द हैं जबकि दर्शनशास्त्र में पारिभाषिक शब्द।

कुछ ऐसे भी शब्द है, जो अलग-अलग शब्दों को मिलाकर बनाए जाते हैं, जैसे – ट्रेक्शन, फारसेप्स, सारटोरियस केनाल, मीडियोलेटरल आदि। इसी प्रकार के कुछ अन्य उदाहरण हैं – नेल पुलर, रेजिस्टैंस क्वाइल, शाक एब्जारवर, एयर ड्राइंग आदि। इनका अर्थ साधारण होते हुए भी गूढ़ हो सकता है। हाइड्रोजन सल्फेट, ब्लू स्टोन, कॉपर सल्फेट, मार्श गैस आदि शब्दों में एक सामान्य है तो दूसरा तकनीकी।

3. तकनीकी शब्द : विशिष्ट विज्ञानों या विषयों में किसी सुनिश्चित अर्थ में प्रयुक्त होने वाले शब्दों को तकनीकी या पारिभाषिक शब्द कहते हैं। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में नवीन विचार, व्यवस्था या वस्तु के लिए पारिभाषिक शब्द का निर्माण किया जाता है। अर्थात् जिस तकनीकी शब्द की परिभाषा की गई हो, जिन शब्दों की सीमा बाँध दी जाती है वे पारिभाषिक शब्द हो जाते हैं और जिनकी सीमा नहीं बाँधी जाती, वे सामान्य शब्द होते हैं। उदाहरण के तौर पर 'डैंसिटी' एक सामान्य शब्द है जो भाववाचक है और विशेषण 'डैंस' से बनाया गया है, जिसका तात्पर्य घन या मोटा है। इसीलिए 'डैंसिटी' का अर्थ 'घनता' या 'घनत्व' हुआ। यदि 'डैंसिटी' की परिभाषा – 'एक पदार्थ के यूनिट वाल्यूम का वजन' की जाए तो यह तकनीकी हो गया। इस प्रकार के जटिल शब्दों को समझने के लिए विशिष्ट विवरण की आवश्यकता पड़ती है।

इसी प्रकार शरीर क्रिया विज्ञान, मनोविज्ञान, प्रकृति विज्ञान, आयुर्विज्ञान में पैराप्लीजिया, ल्यूकोडमी, इन्फ्लेमेशन, ट्यूमर इत्यादि; यांत्रिक प्रवीणता के परिणाम को दर्शाने वाले शब्द जैसे ट्राइप्लेन, ग्लाइडर, डिलीवरी फोर्सेप्स, थर्मामीटर, थर्मोन्यूक्लियर, वैपन इत्यादि।

विधि से संबंधित तकनीकी शब्द हैं – अभियुक्त, प्रतिवादी, पक्का चिट्ठा।

दैनिक समाचार पत्रों में अधिकांश शब्द तकनीकी प्रवृत्ति के होते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली : निर्माण प्रक्रिया

पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की कुछ प्रक्रियाएँ इस प्रकार हैं :

(1) अंगीकरण (2) नवनिर्माण

(3) अनुवाद; और (4) अनुकूलन

1. अंगीकरण का शाब्दिक अर्थ है स्वीकार। वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने अंतर्राष्ट्रीय शब्दों के चयन में अंगीकरण प्रक्रिया का सर्वाधिक उपयोग किया है। जैसे – रेल, रेडियो, पेट्रोल, राडार, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, किलोमीटर इत्यादि। इन शब्दों का देवनागरी में यथावत लिप्यंतरण कर दिया गया है। ऐसा करते हुए भाषा की प्रकृति का भी विशेष ध्यान रखा गया है।

2. नवनिर्माण : जिन शब्दों के भारतीय भाषाओं में उचित पर्याय उपलब्ध नहीं हैं तथा जिनका अंगीकरण करना उपयोगी या संभव नहीं है उनका नए प्रकार से निर्माण

कर दिया गया। इस निर्माण प्रक्रिया में शब्द के भीतर निहित अर्थ पर खास जोर दिया गया। इन शब्दों के नवनिर्माण में संस्कृत में प्रचलित उपसर्गों, प्रत्ययों एवं धातुओं का उपयोग किया गया। नवनिर्माण के निश्चित सिद्धांत नहीं हैं। शब्द के अर्थ और स्वरूप के अनुसार उसमें परिवर्तन होते रहते हैं। उदाहरण के लिए, General शब्द अंग्रेजी के प्रत्यय के रूप में प्रयुक्त होता है लेकिन हिंदी में उपसर्ग की तरह उपयोग कर निम्न प्रकार के शब्द निर्मित किए गए हैं :

Director General	⇒	महानिदेशक
Atorney General	⇒	महान्यायवादी
Solicitor General	⇒	महासॉलिसिटर

उपसर्ग बनाकर बनाए गए कुछ शब्द इस प्रकार हैं :

Authority	⇒	प्राधिकार
Authorities	⇒	प्राधिकारी
Authorised	⇒	प्राधिकृत

3. **अनुवाद** : विकास प्रक्रिया में प्रतिदिन नई-नई संकल्पनाएँ, शब्द एवं यंत्र आविष्कृत हो रहे हैं। अर्थात् स्रोत भाषा शब्दावली को लक्ष्य भाषा में समतुल्यता के आधार पर प्रस्तुत करना। भाषाविदों ने अनुवाद के द्वारा अनेक पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया है। उदाहरणार्थ :

Cold war	⇒	शीत युद्ध	Workshop	⇒	कार्यशाला
Leftist	⇒	वामपंथी	Rightist	⇒	दक्षिणपंथी
Pattern	⇒	प्रतिरूप	Global warming	⇒	वैश्विक तापन

4. **अनुकूलन** : अन्य भाषा का शब्द जब किसी भाषा में बहुप्रयुक्त होने लगता है या उसकी प्रकृति के अनुकूल हो जाता है तो वह भाषा उसे स्वीकार कर लेती है। अनुकूलन के माध्यम से अनेक विदेशी शब्दों को ग्रहण किया गया है। जैसे – ज्यामिति, तकनीक, अकादमिक, गारंटी, वोल्टता, आयनीकरण, कंप्यूटरीकरण, रेलगाड़ी, बस-अड्डा आदि।

पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएँ

1. **पारिभाषिकता** : प्रत्येक तकनीकी शब्द की एक परिभाषा होती है। परिभाषा का उद्देश्य शब्द की सीमा को बाँधना है। ये शब्द विशिष्ट विज्ञानों या विषयों में किसी सुनिश्चित अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, सामान्य भाषा में नहीं। विज्ञान अर्थ को स्थिर करता है, भाषा शब्द को स्थिर करती है। तकनीकी शब्द को पारिभाषिक शब्द कहा जाता है।

2. **निश्चितता** : पारिभाषिक शब्द का एक ही अर्थ सुनिश्चित होता है। यदि किसी पारिभाषिक शब्द से दो स्थितियों, विचारों या भावों का बोध होता हो तो वह शब्द पारिभाषिक

नहीं होगा। उदाहरण के लिए 'कंप्यूटर' कहने से केवल उसी यंत्र का बोध होगा, किसी अन्य का नहीं।

3. विषय सापेक्षता : पारिभाषिक शब्द विषय सापेक्ष होते हैं। जैसे – 'कल्चर' शब्द समाजशास्त्र में संस्कृति के अर्थ में प्रयुक्त होता है तो कृषि-विज्ञान के क्षेत्र में 'कृषि' के अर्थ में।

4. एकार्थता : विषय विशेष में प्रयुक्त होने वाले किसी भी पारिभाषिक शब्द की जगह कोई अन्य शब्द नहीं ले सकता है। दर्शनशास्त्र में प्रयुक्त होने वाले 'माया' शब्द की जगह कोई और शब्द नहीं आ सकता है।

5. अभिधामूलक प्रयोग : पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग केवल अभिधा में ही होता है, लक्षणा या व्यंजना में उनका उपयोग नहीं हो सकता है। उदाहरण के लिए, 'किताब', 'मेज' आदि एक आकृति विशेष की संकल्पना सिद्ध करते हैं।

6. असामान्यता : पारिभाषिक शब्दावली का उपयोग सामान्य बोलचाल में नहीं हो सकता है।

7. सार्वभौमिकता : पारिभाषिक शब्दों का अर्थ सभी जगह एक-सा ही होता है। जैसे – हाइड्रोजन का अर्थ सभी जगह एक ही अर्थ की प्रतीति कराता है।

8. तथ्यपरकता : पारिभाषिक शब्दों के वैज्ञानिक संदर्भ में अनुमान के आधार पर कोई बात नहीं कही जाएगी। उदाहरण के लिए, 'माइक्रोप्रोसेसर' की क्षमता कितनी होती है।

9. वस्तुनिष्ठता : साहित्यिक/आम बोलचाल में व्यक्तिगत चीजों को ले आते हैं। उदाहरण के लिए, 'मैं समझता हूँ कि गाड़ी आपको नहीं मिलेगी?' वैज्ञानिक भाषा में ऐसा नहीं कह सकते हैं। उदाहरण के लिए, 'आँखों में जलन' किसी रोग के बारे में निश्चित बात कहते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के सिद्धांत

1. अंतर्राष्ट्रीय शब्दों को यथासंभव उनके प्रचलित अंग्रेजी रूपों में ही अपनाया जाए। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की प्रकृति के अनुसार ही उनका लिप्यंतरण (Transliteration) हो। उदाहरणार्थ :
   (क) तत्वों और यौगिकों के नाम (Names of elements and compounds) जैसे हाइड्रोजन, कार्बन डाइ-ऑक्साइड।
   (ख) तौल और माप की इकाइयाँ और भौतिक परिमाण की इकाइयाँ (Units of weights measures and physical quanities) जैसे डाइन, कैलोरी, एम्पीयर।
   (ग) व्यक्तियों के नाम पर बनाए गए शब्द (Terms based on proper names) जैसे मार्क्सवाद (कार्ल मार्क्स), ब्रेल (ब्रेल), बॉयकाट (कैप्टन बॉयकाट), गिलोटिन

(डॉ. गिलोटिन), गेरीमेंडर (मि. मेरी) एम्पियर (मि. एम्पियर), फारेनहाइट तापक्रम (मि. फारेनहाइट) आदि।

(घ) वनस्पति विज्ञान, प्राणिविज्ञान, भूविज्ञान आदि की द्विपदी नामावली (Binomial nomenclature)

(ङ) स्थिरांक (constants) जैसे π आदि।

(च) सारे संसार में व्यवहार्य शब्द जैसे रेडियो, पेट्रोल, रेडार, इलैक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन आदि।

(छ) गणित और विज्ञान की अन्य शाखाओं के संख्यांक, प्रतीक चिह्न और सूत्र (Numerals, symbols, signs and formulas) जैसे, साइन, कोसाइन, टेंजेंट, लॉग आदि (गणितीय संक्रियाओं के प्रयुक्त अक्षर रोमन या ग्रीक वर्णमाला के होने चाहिए।)

2. प्रतीक (Symbols) रोमन लिपि में अंतर्राष्ट्रीय रूप में ही रखे जाएँ, परंतु संक्षिप्त रूप (abbreviations) नागरी एवं मानक (standarised) रूपों में विशेषतः साधारण तौल और माप (common weights and measures) में लिखे जाएँ। सेंटीमीटर का प्रतीक जैसे cm. हिंदी में भी ऐसे ही प्रयुक्त हो परंतु नागरी संक्षिप्त रूप (abbriviation in Nagari) से.मी. हो सकता है। यह सिद्धांत बाल साहित्य और लोकप्रिय पुस्तकों में अपनाया जाए। परंतु विज्ञान और प्रौद्योगिकी की मानक पुस्तकों (standard works of science and technoogy) में केवल अंतर्राष्ट्रीय प्रतीक जैसे cm.ही प्रयुक्त करना उपयुक्त होगा।

3. ज्यामितीय आकृतियों (Geometrical figures) में भारतीय लिपियों के अक्षर प्रयुक्त किए जा सकते हैं। जैसे – क, ख, ग, अथवा अ, ब, स। परंतु त्रिकोणमितीय संबंधों में (trigonometric-relations) केवल रोमन अथवा ग्रीक अक्षर ही प्रयुक्त हों, जैसे साइन A क्रॉस B आदि।

4. सामायतः संकल्पनाओं (conceptual terms) को व्यक्त करने वाले शब्दों का अनुवाद किया जाए।

5. हिंदी पर्यायों का चुनाव करते समय सरलता, अर्थ की परिशुद्धता और सुबोधता का विशेष ध्यान रखा जाए। सुधार विरोधी प्रवृत्तियों से बचा जाए।

6. सभी भारतीय भाषाओं के शब्दों में यथासंभव अधिकाधिक एकरूपता लाना ही उसका एकमात्र उद्देश्य हो और इसके लिए ऐसे शब्द अपनाए जाएँ जो (क) अधिक से अधिक भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त होते हों; और (ख) संस्कृत धातुओं पर आधारित हों।

7. ऐसे देशी शब्द जो सामान्य प्रयोग के पारिभाषिक शब्दों के स्थान पर भारतीय भाषाओं में प्रचलित हो गए हैं। जैसे : Telegraph/telegram के लिए 'तार', continent

के लिए 'महाद्वीप', post के लिए 'डाक' आदि इसी रूप में व्यवहार में लाए जाएँ।

8. अंग्रेजी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी आदि भाषाओं के ऐसे विदेशी शब्द जो भारतीय भाषाओं में प्रचलित हो गए हैं (जैसे – टिकट सिग्नल, प्लेटफार्म, ट्रेन, पेंशन, पुलिस, ब्यूरो, रेस्तराँ, डीलक्स आदि) उन्हें इसी रूप में अपनाए जाएँ।

9. अंतर्राष्ट्रीय शब्दों का देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण (Transliteration of International terms into Devnagari) : अंग्रेजी शब्दों का लिप्यंतरण इतना जटिल नहीं हो कि उसके कारण वर्तमान देवनागरी वर्णों में नए चिह्न तथा प्रतीक शामिल करने की आवश्यकता पड़े। शब्दों का देवनागरी में लिप्यंतरण अंग्रेजी उच्चारण के अधिकाधिक अनुरूप होना चाहिए और उसमें ऐसे परिवर्तन किए जाएँ जो भारत के शिक्षित वर्ग में प्रचलित हों।

11. लिंग : हिंदी में अपनाए गए अंतर्राष्ट्रीय शब्दों को अन्यथा कारण न होने पर पुल्लिंग रूप में ही प्रयुक्त किए जाएँ।

11. संकर शब्द (Hybrid formation) : पारिभाषिक शब्दावली में संकर शब्द (जैसे guranteed के लिए 'गारंटित', classical के लिए 'क्लासिकी', codifier के लिए 'कोडकार', Academic के लिए 'अकादमिक' आदि) के रूप सामान्य और प्राकृतिक भाषाशास्त्रीय प्रक्रिया के अनुसार बनाए गए हैं और ऐसे शब्द रूपों को पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकताओं (यथा सुबोधता, उपयोगिता और संक्षिप्तता) का ध्यान रखते हुए व्यवहार में लाना चाहिए।

12. पारिभाषिक शब्दों में संधि और समास : कठिन संधियों का यथासंभव कम से कम प्रयोग करना चाहिए और संयुक्त शब्दों के लिए दो शब्दों के बीच हाइफन लगा देना चाहिए। इससे नई शब्द संरचनाओं को सरलता और शीघ्रता से समझने में सहायता मिलेगी। जहाँ तक संस्कृत पर आधारित 'आदिवृद्धि' का संबंध है, व्यावहारिक लाक्षणिक आदि प्रचलित संस्कृत तत्सम शब्दों में 'आदिवृद्धि' का प्रयोग ही अपेक्षित है परंतु नव-निर्मित शब्दों में इससे बचा जा सकता है।

13. हलंत : नए अपनाए हुए शब्दों में आवश्यकतानुसार हलंत का प्रयोग करके उन्हें सही रूप में लिखना चाहिए।

14. पंचम वर्ण का प्रयोग : पंचम वर्ण के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करना चाहिए। परंतु lens, patent आदि शब्दों का लिप्यंतरण 'लेंस', 'पेटेंट' न करके 'लेन्स' एवं 'पेटेन्ट' करना चाहिए।

❑

डॉ. कुलभूषण शर्मा

कोश-लेखन की परंपरा

कोश का स्वरूप अत्यंत प्राचीन एवं विविधता वाला है। यह ज्ञान का ऐसा क्षेत्र है जिसका आरंभिक रूप संस्कृत साहित्य से ही प्रकाश में आ गया था। कोश की अपनी एक लंबी परंपरा देखी जा सकती है, जिसमें कोश के सामान्य एवं प्रचलित रूप से लेकर व्यापक स्वरूप के भी दर्शन किए जा सकते हैं। संस्कृत वाङ्मय ने कोश को एक अर्थ तो अवश्य दिया था लेकिन कोश आज जिस रूप और जितने भेदों में प्रयुक्त हो रहा है, उसका श्रेय पाश्चात्य एवं आधुनिक भारतीय चिंतकों को जाता है। कोश अपने आदि रूप में कैसा था, उसका धीरे-धीरे कैसे विकास हुआ और आज वह किन रूपों में दृष्टिगत हो रहा है। इन्हीं तथ्यों का संक्षिप्त विचार आलोच्य लेख में किया जाएगा। कोश की यह विकास-यात्रा उसकी महत्ता और विविधता को ही दर्शाती है।

संस्कृत कोश परंपरा : एक विहंगावलोकन

संस्कृत साहित्य का सबसे प्राचीन एवं आरंभिक ग्रंथ वेद है। वैदिक मंत्रों में जहाँ एक ओर संपूर्ण मानव-जीवन की व्याख्या देखी जा सकती है वहीं अनेक विधाओं का अधिष्ठाता भी वेद ही है। सहस्रों वर्षों तक वैदिक मंत्र एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के पास मौखिक परंपरा द्वारा संरक्षित रहते थे। अतः इन वैदिक मंत्रों को स्थाई रूप प्रदान करने के लिए तथा इनकी विधियाँ और उच्चारण संबंधी शुद्धता को बनाए रखने के लिए वेदांग की रचना की गई। वहीं इसके आंतरिक स्वरूप अर्थात् अर्थ की सुरक्षा के लिए व्याकरण और निरुक्त शास्त्र की विद्या का आविष्कार किया गया। भाषा की प्रकृति परिवर्तनशील होने के कारण तथा शब्दार्थ में वृद्धि के फलस्वरूप दुर्बोध शब्दों की व्याख्या में वृद्धि होने लगी। शब्दों की दुर्बोधता ने वेदों पर प्रश्न-चिह्न लगाया और उसकी निरर्थकता की बात की जाने लगी। ऐसे में वेदों के प्रति श्रद्धा का भाव बनाए रखने

तथा वैदिक शब्दों की व्याख्या के लिए 'निघंटु' का निर्माण किया गया, जोकि कोश विद्या का प्रथम व्यवस्थित प्रयास था। निघंटु ही वास्तव में कोश-साहित्य के आरंभ का द्योतक है।

निघंटु पर विचार करने से पूर्व वैदिक संहिताओं के शब्दार्थ संग्रह पर एक दृष्टि डालनी आवश्यक है। वैदिक संहिताओं के अनेक स्थल शब्दकोश की दृष्टि से अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। यजुर्वेद और अथर्ववेद के अनेक सूक्त तो ऐसे प्रतीत होते हैं मानो कि इनमें शब्द-भंडार ही सजा-सजाया प्रस्तुत कर दिया गया हो।[1] ऋग्वेद में भी इस शब्द-भंडार की कुछ झाँकी कतिपय सूक्तों में देखी जा सकती है। ऋग्वेद के दशम मंडल के यक्ष्मा सूक्त में मानव शरीर के विविध अंगों का उल्लेख है जोकि कोशकार की पद्धति पर दिए शब्दों के समान व्यवस्थित है।[2] यजुर्वेद में भी अनेक प्रकार के वर्ष, बारहमासों के वैदिक नाम क्रम से प्रस्तुत किए गए हैं।[3] यही नहीं यजुर्वेद के 24वें अध्याय में 609 जातियों के पशुओं या जीवों का उल्लेख है। इसी प्रकार तीसवें अध्याय में पुरुषमेघ के संदर्भ में सौ से ऊपर व्यवसायियों के नाम हैं। इस प्रकार शब्दकोश का प्राचीनतम रूप वैदिक संहिताओं में ही मिलना आरंभ हो गया था।

सामान्यतः विद्वानों की धारणा रही है कि वैदिक वाङ्मय का सबसे प्राचीन कोश यास्क का निघंटु है। निघंटु के रचनाकार के संबंध में प्रायः मतभेद पाया जाता है। किंतु अधिकांश विद्वान इसे यास्क कृत मानते हैं। निघंटु एक शब्द-संग्रह है जिसमें वैदिक संहिताओं के कठिन 1767 शब्दों को संकलित किया गया है। यास्क के अनुसार निघंटु वह है जिसमें पर्याय धातुओं, पर्याय शब्दों, अनेकार्थी शब्दों तथा देवताओं के नामों का संग्रह हो।[4] मूलतः निघंटु का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है वेदों से चुनकर जमा किया हुआ या एक साथ कहा गया।[5] निघंटु एक ऐसा ग्रंथ है जिसमें वैदिक संहिताओं के कठिन शब्दों की व्याख्या की गई है। इसीलिए भारत में कई विद्वान इसे कोश-साहित्य के आरंभ का द्योतक मानते हैं।

यास्काचार्य का निरुक्त उनके द्वारा रचित 'निघंटु' की सोदाहरण व्याख्यापरक ग्रंथ है। यास्क द्वारा 8वीं सदी ईसवी पूर्व में रचा निरुक्त मूलतः कोश ग्रंथ नहीं है, लेकिन कोशों के विकास में उसका महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। इस रचना में व्युत्पत्ति द्वारा अर्थ स्पष्ट करने की दिशा में कई प्रयास किए गए हैं। निघंटु में वैदिक संहिताओं में प्रयुक्त कुछ पदों की पर्यायवाची क्रम से सूची दी गई है, जबकि कुछ पदों की निरुक्तियाँ निरुक्त में दी गई हैं। निरुक्त की सबसे बड़ी विशिष्टता यही है कि इस ग्रंथ में उल्लिखित निरुक्तियाँ वैदिक अर्थों को जानने की एक नई पद्धति आरंभ करती है। यास्क कृत निरुक्त ग्रंथ बारह अध्यायों में विभाजित है तथा प्रत्येक अध्याय के लगभग तीन से

सात पद हैं। निरुक्त के ये बारह अध्याय तीन कांडों में विभाजित किए गए हैं। ये हैं – नैघुंटक (1-2), नैगम (4-6), दैवत (7-12)। निरुक्त की मुख्य टीकाएँ स्कंदस्वामी, देवराज यज्वा तथा दुर्ग द्वारा रचित हैं।[6] निघंटु एवं निरुक्त ग्रंथों का अवलोकन करने के पश्चात पता चलता है कि वैदिककाल में कोश-विद्या नई वस्तु थी। इस नई विद्या ने शीघ्र ही विद्वानों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया और इसका परिणाम लौकिक संस्कृत में देखने को मिला। वैदिक शब्दों के संकलन की प्रवृत्ति लौकिक संस्कृत में विस्तार पाने लगी जिससे कोश-विद्या का विकास तेजी से होने लगा।

लौकिक संस्कृत ग्रंथों में वैदिककाल के संरक्षण की भावना नहीं थी। बल्कि इस युग में शब्दों के चयन एवं संकलन का मुख्य आधार साहित्य सर्जन और छंद तथा अलंकार का समुचित ज्ञान प्राप्त करता था। इसके अतिरिक्त लोगों तक शब्द-प्रयोग संबंधी सही जानकारी पहुँचे, इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उच्च कोटि के कोश की आवश्यकता महसूस की गई। इन सभी तथ्यों का विश्लेषण कर 'अमरकोश' का लेखन किया गया। 'अमरकोश' लौकिक संस्कृत का इतना महत्वपूर्ण कोश है कि इसे लौकिक संस्कृत के पूरे साहित्य पर विचार करने का आधार मानकर तीन भाग देखे गए – अमरकोश पूर्व काल, अमरकोश; तथा अमरकोश पश्चात् काल।

अमरकोश पूर्व में कई कोश रचे गए थे, जिसका आश्रय लेकर अमरकोश की रचना की गई थी। अमरकोश की टीका कुछ पुराने कोशकारों पर प्रकाश डालती है। इनमें पहला नाम व्याडि का आता है जिन्होंने समानार्थक शब्दों का संकलन कर कहीं-कहीं उनका निर्वचन संबंधी विश्लेषण भी किया था। साथ ही इस कोश में बौद्ध धर्म संबंधी कुछ तथ्यों का विश्लेषण किया गया है। कुछ विद्वान इस ग्रंथ का नाम उत्पीलनी मानते हैं।[7]

व्याडि के पश्चात दूसरा प्रमुख नाम कात्य का माना गया है जिनके कोश का नाम अज्ञात है। इसमें प्रायः समानार्थक तथा अनेकार्थक शब्दों का संकलन कर उनका वर्णनात्मक उल्लेख है। तत्पश्चात् भामुरि कृत 'त्रिकांड' ग्रंथ प्राप्त होता है जिसमें मात्र समानार्थक शब्दों का संकलन किया गया है। इसके अतिरिक्त अमरदत्त कृत 'अमरमाला', वाचस्पति का 'शब्दार्णव', विक्रमादित्य का 'संसारवर्त', महाक्षपणक द्वारा रचित 'अनेकार्थमंजरी' और अनेकार्थध्वनिमंजरी' आदि कोश-ग्रंथ प्राप्त होते हैं। इन कोश-ग्रंथों में शब्दों के पर्याय, कुछ में व्युत्पत्ति द्वारा अर्थ संकेत, अर्थों की व्यापकता का चित्रण, धातु-पाठ का विवरण, कुछ में शुद्ध वर्तनी का उल्लेख तथा शब्दों का वर्गीकरण भी देखा गया है। इन कोशों में इतनी व्यापकता होने के बाद भी इनका सबसे कमजोर पक्ष यह है कि ये सभी ग्रंथ आज अनुपलब्ध हैं। इन कोश-ग्रंथों की जानकारी अमरकोश की टीकाओं से प्राप्त होती है।

लौकिक संस्कृत कोश-परंपरा का सबसे महत्वपूर्ण एवं आरंभिक व्यवस्थित कोश

'अमरकोश' कहलाता है। इस कोश के रचनाकार अमर सिंह हैं जिन्हें जगत्पिता भी कहा जाता है। अमरकोश को लौकिक संस्कृत के स्वर्णिम युग का पर्याय माना गया है। इस वृहद कोश में लगभग 10,000 शब्द संकलित हैं जिसे विभिन्न तीन कांडों में सज्जित किया गया है। अमर सिंह ने इस कोश का नाम 'लिंगानुपात' रखा था, लेकिन यह कोश 'अमरकोश' के नाम से ही बहुत प्रसिद्ध हुआ। अमरकोश के शब्द-संकलन में स्वर्ग के विश्रुत देवताओं के पर्यायवाषकों, वनौषधि वर्ग, लिंगादि संग्रह वर्ग, नाट्य वर्ग, सिंहादि वर्ग, मनुष्य वर्ग आदि का उल्लेख किया गया है। अमरकोश देवताओं के नाम संबंधी ऐसे शब्दों का संकलन प्रस्तुत करता है जिनका प्रयोग साहित्य में दुर्लभ है। अमरकोश पूर्ण रूप से अनुष्टुप छंद में ही लिखा गया है। अमरकोश की एक अन्य विशिष्टता यह है कि इसकी प्रस्तावना में कुछ नियम बना दिए गए हैं जिससे कोश की रचना-पद्धति का ज्ञान होता है और कोश संबंधी-विशेष संकेतों का पता चलता है। साथ ही एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि मध्यकालीन हिंदी कोश अमरकोश से अत्यधिक प्रभावित है। अमरकोश इतना प्रसिद्ध हुआ था कि प्राचीनकाल से ही इस पर बड़ी संख्या में टीकाएँ लिखी जाने लगी थीं। इस पर 70 से अधिक व्याख्याएँ लिखी गई हैं जिनमें से कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण मानी गई हैं। इस प्रकार लौकिक संस्कृत का सबसे महत्वपूर्ण कोश अमरकोश माना गया जोकि अपने ढंग का एकमात्र कोश है तथा इसने आधुनिक कोशों को आधारभूमि भी प्रदान की।

अमरकोश के परवर्ती कोशकारों में अमरकोश का विशेष प्रभाव देखने को मिलता है। इस काल में अनेक कोश प्रकाशित हुए। वास्तव में अमरकोश के बाद सामान्यतः नानार्थ और एकार्थ कोशों की रचनाएँ ही की गईं। शाश्वत ने 'अनेकार्थ समुच्चय' नामक कोश की रचना की, जिसके कई श्लोक और श्लोकार्थ अमरकोश के श्लोक के समान ही हैं। 850 ई. के लगभग 'अभिधान रत्नमाला' कोश की रचना की गई, जिसे श्री जयशंकर जोशी ने बड़े मनोयोग के साथ उपयोगी बनाने की चेष्टा की। आज यह कोश 'हलायुध कोश' के नाम से प्रसिद्ध है, जिसके पहले भाग में पर्यायवाची शब्दों के साथ-साथ उनके अंग्रेजी पर्याय भी दिए गए हैं। जबकि दूसरे भाग में शब्दों की व्युत्पत्तिपरक और व्याकरणिक व्याख्या विस्तार से की गई है।

'हलायुध कोश' के पश्चात् यादव प्रकाश द्वारा 1100 ई. में रचित 'वैजयंती कोश' विशेष उल्लेखनीय है जोकि पर्यायवाची और अनेकार्थक दो भागों में प्राप्त होता है। इसमें संकलित वैदिक शब्द अधिक प्रामाणिक माने गए हैं। जबकि 1111 ई. में महेश्वर द्वारा संपादित 'विश्व प्रकाश' और 'शब्द कोश प्रकाश' कोश की विशिष्ट परंपरा को विकसित करने में अहम भूमिका निभाता है। वहीं मंख ने 1140 ई. में 'मंखकोश' निकाला, जोकि

1007 पदों से बना है। इन कोशकारों के अतिरिक्त माधवकर कृत 'पर्यायमाला' (700 ई.), महाक्षपणक कृत 'अनेकार्थक ध्वनि मंजरी' (900 ई.), हरिचरण सेन कृत 'पर्यायमुक्तावली' (1000 ई.), चक्रपाणिदत्त कृत 'शब्दचंद्रिका' (1060 ई.), पुरुषोत्तम देव कृत 'त्रिकांड शेष' (1100 ई.), धनंजय कृत 'नाममाला' (1123 ई.), धरणीधर कृत 'धरणी कोश' (1159 ई.), श्रीहर्ष कृत 'द्विरूप-कोश' (12वीं सदी), बोपदेव कृत 'हृदय दीपिका' (1250 ई.) आदि कोश विशेष रूप से उल्लेखनीय रहे हैं। इनके साथ-साथ इसी काल में 1275 के आसपास मेदिनीकर द्वारा 'मेदिनी कोश' लिखा गया। इस कोश का भी मूलाधार अमरकोश है, जिसमें अंतिम वर्ण के अनुसार शब्दों के चयन में आदि अक्षर को दृष्टि में रखकर क्रम बाँधा गया है। हेमचंद्र द्वारा संपादित 'अभिधान चिंतामणि', 'अनेकार्थ-संग्रह', 'निघंटु शेष' आदि कोश भी संस्कृत की कोश परंपरा को समृद्ध करने में अहम भूमिका निभाते हैं।

बारहवीं सदी के पश्चात् मध्यकालीन एवं आधुनिक काल में भी संस्कृत के कई कोश आए। इन कोशों में कोश-कला को एक नवीन स्वरूप मिला और अब कोश की महत्ता एवं उपयोगिता को समाज समझने लगा तथा इसकी निर्माण प्रक्रिया पर गंभीरता से विचार करने लगा। इस युग के कोशों के अंतर्गत अब वैदिक शब्दों के साथ-साथ लौकिक एवं पालि-प्राकृत शब्दों को संकलित किया जाने लगा तथा साथ ही पर्याय देने का चलन भी आरंभ हुआ, जिससे कोशों की महत्ता दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी। मध्यकालीन युग के प्रमुख कोश-ग्रंथ हैं – माधव कृत 'एकाक्षर रत्नमाला' (1350 ई.); मदनपाल कृत 'मदनविनोद' (1375 ई.); गदा सिंह कृत 'अनेकार्थ ध्वनिमंजरी' (1431 ई.); महीप कृत 'एकार्थ तिलक' (1404 ई.); शुभशील कृत 'पंचवर्ग संग्रह' (1450 ई.); रूपचंद्र कृत 'रूपमंजरी नाममाला' (1588 ई.); हर्ष कीर्ति कृत 'शारदीयाख्यानाममाला' (16वीं सदी); केशव कृत 'कल्पद्रुम कोश' आदि।

आधुनिक काल में अंग्रेजों के आगमन के फलस्वरूप संस्कृत कोश साहित्य में पाश्चात्य चिंतन का समावेश हुआ। इसके प्रतिफलस्वरूप संस्कृत कोशों में नया दृष्टिकोण समाहित हुआ। यूरोप से आए पादरियों तथा अंग्रेज शासकों ने संस्कृत भाषा में विशेष रुचि ली। इससे प्रभावित होकर अन्य विद्वानों ने भी कोश कार्य जारी रखा। पाश्चात्य चिंतकों की रुचि वैदिक साहित्य के साथ-साथ लौकिक संस्कृत पर समान रूप से थी। अतः इस युग में प्राचीन शैली से भिन्न कुछ नए प्रकार के कोश-ग्रंथों की रचना की गई। ऐसे कोश-ग्रंथों में एच.एस. विल्सन द्वारा कलकत्ता के फोर्ट विलियम कॉलेज में परंपरागत पंडितों की सहायता से तैयार किया गया संस्कृत-अंग्रेजी कोश-ग्रंथ विशेष स्थान रखता है। राजा राधाकांत देव द्वारा सात खंडों में 'शब्दकल्पद्रुम' की रचना की गई, जो अपने आप में कई विशिष्टताओं को लिए हुए था।[8] संस्कृत साहित्य में कोश-परंपरा की अक्षुण्ण

धारा को निरंतर प्रवाहित कराने में हेमचंद्र कृत 'आधुनिक अभिधान चिंतामणि', वामन शिवराम आप्टे कृत 'संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी', प्रो. रामस्वरूप शास्त्री कृत 'आदर्श हिंदी-संस्कृत कोश', डॉ. राम कुमार राय कृत 'राजतरंगिणी कोश', मैकडॉनल तथा कीथ कृत 'वैदिक इंडैक्स', डॉ. राजवंश सहाय कृत 'संस्कृत साहित्य कोश' आदि कोशों का अन्यतम स्थान माना गया है।

हिंदी-कोश परंपरा

हिंदी कोश परंपरा अत्यंत प्राचीन एवं व्यापक है। हिंदी कोश का शुभारंभ 9वीं शताब्दी के साथ ही हो गया था। इस समय तक भारतीय परिस्थितियाँ बहुत संभली हुई थीं। अतः साहित्य सृजन के साथ-साथ शब्द को साधने की कला सरीखा कार्य अर्थात् कोश-लेखन भी बिना किसी अवरोध के संपन्न हो रहा था। भारतीय हिंदी साहित्य के अध्ययन के समान हिंदी कोश के अध्ययन को भी तीन भागों में वर्गीकृत करके देखा जा सकता है। हिंदी कोश परंपरा का पहला भाग आदिकाल है, जो 9वीं शताब्दी से 12वीं शताब्दी के मध्य का काल था। इस काल में भारतीय परिस्थितियाँ आपसी मतभेद तथा कला के प्रति समर्पण भाव को रेखांकित करती है। 13वीं शताब्दी से 18वीं शताब्दी तक का काल मध्यकाल कहा जाता है। इस काल में भारत में कई उथल-पुथल देखे गए तथा मुस्लिम-राज स्थापना के साथ कला का भी उत्कर्ष काल देखा गया। जबकि 19वीं शताब्दी से आज तक का काल आधुनिक काल कहलाता है। इस काल में पाश्चात्य चिंतन का प्रभाव देखा गया और नई विधाएँ एवं अवधारणाएँ भारत में प्रयुक्त की जाने लगीं। इस प्रकार हिंदी साहित्य की परंपरा एवं भारतीय समाज विविधताओं से युक्त रहा है और उसका प्रभाव साहित्य एवं कोश जैसी विधाओं पर भी देखा गया।

कोश-निर्माण का कार्य एक सुनिश्चित पद्धति द्वारा ही संपन्न हो सकता है। यह एक श्रम साध्य कार्य है जिसमें किसी भाषा विशेष के शब्दों का संकलन उनके विविध सांदर्भिक अर्थों की उपादेयता के आधार पर किया जाता है। यदि हिंदी कोशों के आरंभिक रूप पर प्रकाश डाला जाए तो पता चलता है कि अपने प्रारंभिक रूप में कोश मात्र शब्दार्थ संग्रह का माध्यम था लेकिन जैसे ही वह एक विधा के रूप में निरंतर विकसित होने लगा तभी से वह शब्द-संग्रह मात्र न रहकर शब्द विशेष की संपूर्णता को व्यक्त करने वाला साधन बन गया। कोश के इस विकसित रूप से अधिकांश विद्वान प्रभावित हुए और उनकी महत्ता एवं उपादेयता के आधार पर उसका पूर्ण विकास किया। अतः विद्वानों का मानना है कि कोश द्वारा केवल शब्दों का क्रम ही व्यवस्थित नहीं होता अपितु शब्द संग्रह से अर्थ विवेचन कर संपूर्ण प्रक्रिया व्यवस्थित, पद्धतिपरक और नियमानुसरण पर आधारित होती है। हिंदी में कोश-परंपरा के अध्ययन में कोश संबंधी विचार ही पुष्ट होता

है। विविध कालक्रमों के आधार पर हिंदी कोश-परंपरा का विकास इस प्रकार है :

(1) **आदिकालीन हिंदी-कोश परंपरा :** आदिकालीन हिंदी साहित्य का कालक्रम 9वीं शताब्दी से 12वीं शताब्दी के मध्य का काल माना जाता है। हिंदी साहित्य के इस आदिकाल में प्रचलित हिंदी के आरंभिक रूप से पूर्व संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा अपना प्रभाव छोड़ चुकी थी। ऐसे में भारतीय विद्वत समाज एवं सामान्य जनमानस भी इन भाषाओं से बहुत प्रभावित था। इस काल में संस्कृत कोश लेखन की परंपरा तो चल ही रही थी, साथ ही पालि एवं प्राकृत भाषाओं में भी कोश-लेखन विकसित हुआ। पालि भाषा को मूलतः बुद्ध-वचनों की रक्षा की भाषा कहा जाता है। यह मुख्यतः बौद्ध धर्म की भाषा होने के कारण भारत के कई क्षेत्रों में इस भाषा का विकास हुआ। कई बौद्ध साहित्यों में बौद्ध ग्रंथों के विशिष्ट अर्थों को स्पष्ट करने के लिए कोश-ग्रंथों के निर्माण के संकेत मिलते हैं। 'महाव्युत्पत्ति' कोश इसी प्रकार का कोश माना गया है जिसमें 284 प्रकरणों में विभक्त लगभग नौ हजार शब्दों में बौद्ध धर्म की अवधारणाओं के साथ-साथ पशुओं, वनस्पतियों तथा रोगों आदि का भी उल्लेख मिलता है। पालि भाषा केंद्रित कोशों में 'अमरकोश' का प्रभाव देखा गया है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वैदिक और लौकिक कोशों से अलग हटकर इसमें मुहावरों का भी संग्रह किया गया है।[9] इस भाषा के अन्य प्रमुख कोश हैं – सद्धम्मकित्ति कृत 'एकक्खर कोश', मोग्गलान कृत 'धातु पाठ', सद्धनीति कृत 'धातुमाला', मोग्गलान कृत 'अभिधानाप्पदीपिका', हिंगुलबल जिनरतन कृत 'धात्वत्थदीपनी' आदि।

आदिकालीन साहित्य के अंतर्गत पालि के पश्चात् प्राकृत के कोशों का स्वरूप देखा गया। प्राकृत भाषा में जैन मतों से संबंधित साहित्य एवं कोशों को देखा जा सकता है। प्राकृत कोशों में सबसे प्राचीन कोश धनपाल द्वारा रचित 'पाइयलच्छिनाममाला' (972 ई.) मिलता है जिसमें तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों का संकलन कर 279 गाथाएँ भी शामिल की गई हैं। इनके पश्चात् हेमचंद्र द्वारा रचित 'देशीनाममाला' नामक कोश अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस कोश के शब्दों का अर्थ संस्कृत में दिया गया है तथा शब्दों का संकलन जनभाषा प्राकृत के आधार पर ही किया गया है। आचार्य हेमचंद्र ने अपने कोश-ग्रंथ में धनपाल, देवराज, गोपाल, द्रोण आदि विद्वानों का भी उल्लेख किया है किंतु इनके कोश-ग्रंथ प्रायः अनुपलब्ध हैं जिसके कारण इनका नामोल्लेख मात्र ही मिलता है। प्राकृत भाषा में कोशों के अतिरिक्त चूर्णी साहित्य भी मिलता है। चिनदासमणि कृत 'आचारांग चूर्णी', चिनदासमणि कृत 'निशीथ', आदि चूर्णी साहित्य में शब्दों के अर्थ को व्युत्पत्ति के साथ समझाया गया है। ये मूल रूप से गद्य कथाएँ हैं जिनमें कथा-संकलन के साथ शब्दों की व्युत्पत्ति भी दी गई है। अतः प्राकृत में रचित यह

चूर्णी साहित्य कोश-परंपरा के संदर्भ में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

प्राकृत के बाद भारतीय साहित्य में अपभ्रंश का प्रयोग देखा गया। अपभ्रंश में अलग से कोशों की रचना नहीं दिख पाई है। मूलतः प्राकृत भाषा के अधिकांश शब्द अपभ्रंश के भी हैं। अतः प्राकृत एवं अपभ्रंश में मूल रूप से अधिक अंतर नहीं देखा जाता। यही कारण है कि हेमचंद्र, अब्दुल रहमान, स्वयंभुवदेव, पुष्पदंत आदि प्राकृत एवं अपभ्रंश दोनों के ही साहित्यकार माने जाते हैं। अपभ्रंश कोशों में प्राकृत शैली का ही अनुगमन किया गया है। कोई विशिष्ट तथा उल्लेखनीय कोश ग्रंथ अपभ्रंश में मिलता ही नहीं है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य के आदिकाल में पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश के कोश प्राप्त होते हैं जिनमें प्रायः संस्कृत कोशों का प्रभाव और शब्दों के पर्याय देने की पद्धति का ही बोध होता है।

(2) **मध्यकालीन हिंदी-कोश परंपरा :** मध्यकाल के अंतर्गत 13वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी का समय आता है। मध्यकालीन भारत में कई उतार-चढ़ाव देखे गए। यह मुगलों की स्थापना एवं उनकी शासन-व्यवस्था का काल था। इस युग में एक ओर राजनीतिक उठा-पटक चली तो दूसरी ओर सुदृढ़ राज-व्यवस्था भी देखी गई। इस युग में साहित्य-सृजन के साथ-साथ विविध कला-कृति संबंधी कार्य भी प्रकाश में आए। साहित्यिक रचनाओं के साथ ही शब्दों के संकलन की प्रवृत्ति भी इस युग में देखी गई जिसके माध्यम से साहित्य एवं साहित्यिक अवधारणाओं को संरक्षित रखा जाता था। मध्यकालीन साहित्य में मुगल सत्ता द्वारा अरबी-फारसी शब्दावली का भरपूर प्रचार-प्रसार द्वारा किया गया। इसी काल में उर्दू-हिंदी मिश्रित भाषा का प्रचलन जोर पकड़ रहा था। यही कारण है कि ऐसे में कोशों की तीव्र आवश्यकता महसूस की गई तथा इस आवश्यकता की पूर्ति का भी प्रयास जारी रहा।

मध्यकालीन साहित्य में सैकड़ों छोटे-बड़े कोशों का निर्माण हुआ। इन कोशों में से कुछ आज भी उपलब्ध हो जाते हैं। कुछ कोश-परंपरा के विकास में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं जबकि कुछ कोश मात्र प्राचीन कोशों की पुनरुक्ति ही हैं। अतः हम यहाँ ऐसे कोशों की ही बात करेंगे जोकि विकास-क्रम को प्रदर्शित कर मध्यकालीन हिंदी की कोश पद्धति को समझाने में सहायक रहे हैं। इस युग के प्रमुख कोश हैं : नंददास कृत 'नाममाला', 'अनेकार्थ मंजरी', नारायण सिंह भाटी के संपादन में प्रकाशित 'डिंगल कोश', गरीबदास कृत 'अनभै प्रबोध', मिर्जा खाँ कृत 'तुहफुलहिंद', रत्नजीत कृत 'भाषा शब्द सिंधु', 'भाषा धातुमाला', खुसरो कृत 'खालिक बारी' आदि। इन सभी कोशों में संस्कृत के 'अमरकोश' का प्रभाव देखा जा सकता है। मध्यकालीन कोश 'अमरकोश'

के केवल शब्दों को ही संकलित नहीं करते बल्कि इनकी कोश-संपादन की पद्धति या शैली भी 'अमरकोश' से प्रभावित है। इन कोशों में 'अमरकोश' के समान पद्य में ही शब्द संकलित हैं। पर्याय एवं अनेकार्थ, दोनों प्रकार के कोशों की रचना की गई। इन कोशों की प्रमुख विशेषता यह है कि इनके शब्द संग्रह में वर्णमाला अनुक्रम का विकास पाया जाता है। उदाहरण के लिए 'भाषा शब्द सिंधु' एवं 'भाषा धातु माला' में रत्न जीत ने वर्णन अनुक्रम का विशेष ध्यान रखा है। इसके साथ-साथ गरीबदास द्वारा संपादित 'अनभै प्रबोध' पारिभाषिक शब्दकोश हैं जिसमें संत-साहित्य में आने वाली उलटबांसियों और प्रतीकों आदि का संग्रह किया गया है। इसी शृंखला में मिर्जा खाँ द्वारा संपादित 'तुहफुलहिंद' कोश में भिन्न पद्धति का सहारा लेते हुए समस्त कोश को अध्याय एवं प्रकरण में विभाजित किया गया है। इस कोश के संबंध में डॉ. सुनीति कुमार चैटर्जी लिखते हैं कि ''मिर्जा का ध्वनि विश्लेषण महत्वूपर्ण अध्ययन है और इंडो आर्य भाषा-शास्त्र में ध्वनि तत्व का अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के लिए बड़ा लाभदायक है।''[10]

मध्यकालीन कोश-परंपरा के अंतर्गत संस्कृत की पद्धति पर संपादित एकाक्षरी कोश भी देखे जा सकते हैं। हिंदी के ऐसे कोशों में वर्ग देने की प्रथा तो थी ही इसके साथ-साथ इसमें शीर्षक भी दिए गए हैं। उदाहरण के लिए, नंददास के 'अनेकार्थ' और 'नाममाला' में वर्ग न देकर शीर्षक ही दिए गए हैं, यथा – सुरभि शब्द, कुथ शब्द, कुंतल शब्द आदि। इस युग में रचित डिंगल कोशों में भी शब्द वर्णानुसार नहीं बल्कि नाममाला के समान शीर्षकों के ही अंतर्गत रखे गए हैं। इस प्रकार मध्यकालीन कोशों पर 'अमरकोश' के अतिरिक्त भी अन्य अनेक प्रकार के कोशों का प्रभाव देखने को मिलता है।

मध्यकालीन हिंदी कोशकार शब्द संकलन का मुख्य आधार संस्कृत के 'अमरकोश' एवं 'मोदिनी कोश' को मानते हैं। इस काल में लिंग-पारायण कोशों की रचना नहीं की गई। कई-कई कोशों में अंतिम वर्णाक्रम के अनुसार का भी प्रयोग हुआ है। इस युग के अधिकांश कोशों में उच्चारण एवं वर्तनी देने के साथ-साथ शब्द को परिभाषित भी किया गया है। शब्दों के पर्याय देकर उनकी गिनती भी की गई है। मध्यकालीन धारा में मुख्य रूप से अरबी-फारसी कोश परंपरा का भी निर्माण किया गया है। इन कोशों के अंतर्गत छंद तथा पर्याय देने का ढंग एकदम संस्कृत परंपरा जैसा ही है। डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार हिंदी-उर्दू की परंपरा में 'सम-दरबारी', 'इज़दरबारी', 'अल्लाबारी', 'वाहिदबारी', 'राज़कबारी' तथा 'हामिदबारी' आदि कई छंदोबद्ध कोश बनाए गए और उनकी पांडुलिपियाँ विभिन्न पुस्तकालयों में भी उपलब्ध हैं।[11] अकरबुल मवारिद का 'लुगात ए गुजरी' से भारतीय मानसिकता को समझने के लिए अंग्रेजों द्वारा द्विभाषी कोश-रचना का सूत्रपात हुआ। इस संदर्भ में सर्वप्रथम 1772 ई. में हैडले ने उर्दू व्याकरण लिखकर

उसके परिशिष्ट में 'अंग्रेजी-हिंदुस्तानी कोश' लिखा है। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने इसे 'हिंदी-अंग्रेजी' का प्रथम द्विभाषी कोश माना है।[12] इस कोश के पश्चात् द्विभाषी कोशों की एक शृंखला सी बन गई जोकि अनवरत रूप से चलती रही। इसी शृंखला में जे. फर्ग्युसन कृत 'ए डिक्शनरी ऑफ द हिंदुस्तान लैंग्वेज इंग्लिश–हिंदुस्तान व हिंदुस्तान इंग्लिश' (1773), हेनरी हैरिस द्वारा संपादित 'हिंदुस्तान इंग्लिश डिक्शनरी', गिलक्रिस्ट द्वारा रचित 'ओरियंटल लिंग्विस्ट' आदि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है।

1800 ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की गई जिसने समस्त भारतीय चिंतन को परिवर्तित कर दिया। परिणामस्वरूप भाषा-शिक्षण से प्रेरित होकर कोशों की रचना की जाने लगी। इस काल में अंग्रेजों को हिंदी शब्द बताने तथा भारतीयों तक अंग्रेजी शब्द पहुँचाने के लिए कई कोशों का निर्माण किया गया। वहीं दूसरी ओर कई भारतीय विद्वानों पर भी अंग्रेजी चिंतन का प्रभाव पड़ने लगा। भारतीय चिंतक संस्कृत तक सीमित न रहकर पाश्चात्य विद्वानों के कोशों का प्रभाव ग्रहण कर एकभाषी, बहुभाषी, पर्याय, विलोम एवं उत्पत्ति कोशों का निर्माण करने लगा। इस प्रकार, आधुनिक काल के पहले प्रभाव में कोश की व्यापकता बढ़ने लगी जिसमें कोश को उसका मूल रूप धीरे-धीरे सामाजिक परिवर्तन के अनुरूप मिलने लगा। इन कोशों में पहली बार शब्दार्थ के साथ-साथ विविध पर्यायों एवं परिभाषाओं को भी महत्व दिया।

आधुनिककालीन हिंदी के आरंभिक काल के कुछ प्रमुख कोशों के नाम हैं – Dictionary, English Hindustani – शेबक, Dictionary, English and Hindi – मैथ्यू थॉमसन, A Pocket Dictionary of English and Hindustani – आर.एस. डोबी, An Anglo-Hindoostanee Dictionary – हैनेल ग्रेव आदि द्विभाषिक कोश; बालकराम – 'विश्वनाम माला', सागर कवि का 'धनीराममाला' केसर कीर्ति का 'नाम रत्नाकर बोध', दयाराम त्रिपाठी का 'अनेकार्थ', मातादीन का 'नानार्थ नव-संग्राहवलि' आदि। इन कोशों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीयों ने हिंदी में पर्याय कोश तथा पाश्चात्य विद्वानों ने अंग्रेजी-हिंदी द्विभाषिक कोश विकसित किए। वस्तुतः भारतीय चिंतक इस समय अध्ययन की प्रवृत्ति से गुजर रहे थे।

(3) विकास काल (1851-1951 तक) : इस काल के दौरान अंग्रेजी सत्ता पूरी तरह से भारतीय जीवन में अपना आधिपत्य जमा चुकी थी। इसके साथ-साथ इस युग में पाश्चात्य चिंतन का भी प्रभाव भारतीय मानस में देखने को मिलता है। यह ऐसा समृद्ध युग था जिसमें भारतीय विद्वानों एवं कोशकारों द्वारा द्विभाषिक कोशों की भरमार देखने को मिलती है। इस युग में द्विभाषिक कोशों की रचना द्वारा जहाँ एक ओर हिंदी भाषा का गहन अध्ययन किया गया, वहीं दूसरी ओर सामान्य जनमानस तक अंग्रेजी शब्दावली पहुँचाने का कार्य

भी इसी युग में हुआ। इस युग में शब्दकोशों की सबसे प्रमुख विशिष्टता यही थी कि अंग्रेजी-हिंदी की विविध शब्दावलियों का निर्माण कर नवीन संकल्पनाओं एवं नवीन तत्वों को भारतीय मानस तक पहुँचाया जाए। इस युग के शब्दकोश पाश्चात्य सिद्धांतों के आधार पर निर्मित किए गए साथ ही उनमें अमर कोश की प्रवृत्ति का भी सुंदर समन्वय किया गया ताकि इससे नवीन विचार उभरें, जो दोनों संस्कृतियों के पोषक एवं महत्ता लिए हों। कोशकारों ने इस युग में कोश के अंतर्गत शब्दों के अर्थ के अतिरिक्त उच्चारण, व्युत्पत्ति, पर्याय एवं भाषिक प्रयोग भी दिए। 1900 ई. तक के कोशों में प्रायः अंग्रेजी पद्धति का ही अधिक प्रयोग किया गया था।

कोश-निर्माण के अंतर्गत संस्कृत विचारधारा और पाश्चात्य वर्गीकरण का समन्वय 1900 से 1950 के बीच में देखने को मिलता है। इस काल के अंतर्गत कोश की परिसीमा शब्दार्थ से उठकर बृहत् स्वरूप ग्रहण कर चुकी थी। कोश की दृष्टि से यह काल सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि इस युग में कोशकार तत्कालीन कवियों से प्रभावित होकर सांस्कृतिक शब्दों को महत्ता देने लगे थे तथा साथ ही स्वतंत्रता संग्राम के इस काल में जागृति के लिए समन्वयात्मक दृष्टि को ही महत्ता दी गई थी। यही कारण है कि इस काल के रचनाकारों एवं कोशकारों में विविधता के दर्शन होते हैं जोकि व्यापक एवं सांदर्भिक शब्दों को एकत्र कर उनके विविध पर्यायों द्वारा जहाँ एक ओर कवियों की शब्द-संपदा से अवगत करा रहे थे, वहीं दूसरी ओर सामान्य ज्ञान के सम्मुख भी समृद्ध शब्द-संपदा प्रस्तुत कर ज्ञान का विस्तार किया गया।

सन् 1850 से 1950 के मध्य कई कोशों का निर्माण हुआ। इस काल के प्रमुख एवं चर्चित कोश तथा कोशकार हैं – मथुरा प्रसाद मिश्र कृत 'अंग्रेजी-हिंदी-उर्दू कोश', सदासुखलाल वर्मा कृत 'ऐंग्लो हिंदुस्तानी कोश', डॉ. एस.डब्ल्यू फैलन कृत 'डिक्शनरी ऑफ द हिंदुस्तानी प्रोवर्ब्स', रामप्रताप शर्मा कृत 'अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश', रामनारायण लाल कृत 'स्टूडेंट्स प्रैक्टिकल डिक्शनरी इन देवनागरी कैरेक्टर्स', रामचंद्र पाठक कृत 'भार्गवाज़ स्टैंडर्ड इलैस्ट्रेटेड डिक्शनरी ऑफ इंग्लिश लैंगुएज', बाबा बैजूदास कृत 'विवेक कोश', मुंशी मंगली लाल साहब कृत 'मंगल कोश', पं. बद्रीनारायण मिश्र कृत 'श्रीधर भाषा कोश', द्वारका दास चतुर्वेदी कृत 'संस्कृत-हिंदी कोश', डी.डी. व्यास कृत 'युगल कोश', रामचंद्र वर्मा कृत 'देवनागरी उर्दू-हिंदी कोश', प्लॉट्स कृत 'हिंदी-उर्दू-अंग्रेजी कोश' आदि। इन कोशों की प्रमुख विशिष्टता यही है कि ये कोश शब्द संकलन से आगे बढ़े, लेकिन उस समय कोश-कार्य एक टीम वर्क रूप में नहीं बल्कि एक ही व्यक्ति द्वारा बड़ी कठिन परिश्रम से संपन्न किया जाता था।

(4) उत्कर्ष काल (1951 से आगे) : 1951 का समय स्वतंत्र भारत का वर्ष है।

इस वर्ष से स्वतंत्र भारत में अनेक संकल्पनाओं और स्वप्नों ने आकार ग्रहण करना शुरू किया। यह ऐसा समय बना जो आधुनिकता की चरम व्यवस्था की ओर अग्रसर होने जा रहा था। स्वतंत्र भारत में जहाँ अव्यवस्था का स्वरूप देखने को मिला, वहीं बदलती परिस्थितियों ने ज्ञान के पूरे चिंतन को ही परिवर्तित कर दिया। अब साहित्य एवं समाज का स्वर वैयक्तिकता की ओर अग्रसर था। यही कारण है कि इस काल में विविधता एवं व्यापकता के दर्शन होते हैं। इसी काल में हिंदी राजभाषा के आसन पर विराजित हुई। इसी दौरान ही औद्योगिक क्रांति ने प्रशासनिक व्यवस्था एवं स्वरूप को पूरी तरह से बदल दिया। इसलिए शब्द का आर्थी ढाँचा परिवर्तित हुआ और तकनीकी एवं पारिभाषिक शब्दावली की भरमार होने लगी।

1951 से अब तक का भारतीय चिंतन पाश्चात्य चिंतन का पक्षधर कहा जा सकता है। इस काल में मानक भाषा के विधान का प्रयास किया गया तथा भाषाविज्ञान की विविध संकल्पनाओं के आधार पर भाषा एवं समाज का चिंतन किया गया। परिणामस्वरूप हमारे सामने नवीन संकल्पनाएँ एवं शब्द आए और इन्हें अभिव्यक्ति देने के लिए कोश-निर्माण का आश्रय लिया गया। इस काल में कोश की पूर्ण अवस्था की गई और इसे एक टीम वर्क के रूप में एक प्रक्रिया के साथ रचा जाने लगा। व्याकरण, उच्चारण, वर्तनी, चित्र, आरेख, व्युत्पत्ति, अर्थ, प्रयोग, लोकोक्ति-मुहावरे आदि का संकलन कर कोशों का निर्माण किया गया। पदों के स्थान पर कोश कार्य अब केवल गद्य में किया गया है। शब्दकोश विविध रूपों – ज्ञान कोश, पद कोश, पारिभाषिक कोश, बहुभाषिक कोश, समांतर कोश, विश्व कोश, पर्याय कोश, पर्याय कोश, व्यक्ति-कृति कोश आदि में रचे जाने लगे। आज का कोश-कार्य शब्द का आधारभूत स्रोत बन चुका है। कोश का यह रूप आज के युग में अपना सशक्त स्थान रखता है।

1951 से अब तक प्रकाशित अनेक कोश देखे जा सकते हैं। कुछ प्रमुख एवं विशिष्ट कोश हैं – डॉ. हरदेव बाहरी कृत 'बृहत अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश', डॉ. रत्न प्रकाश कृत 'बृहत अंग्रेजी-हिंदी कोश', फादर कामिल बुल्के कृत 'अंग्रेजी-हिंदी कोश', कालिका प्रसाद श्रीवास्तव कृत 'बृहद हिंदी कोश', रामचंद्र वर्मा कृत 'संक्षिप्त हिंदी प्रामाणिक कोश', ब्रजकिशोर मिश्र कृत 'राष्ट्रभाषा कोश', कृष्ण मोहन गुप्त कृत 'संक्षिप्त हिंदी प्रामाणिक कोश', भोलानाथ तिवारी कृत 'वृहत पर्यायवाची कोश', बद्रीनाथ कपूर कृत 'शब्द-परिवार कोश', भोलानाथ तिवारी कृत 'हिंदी मुहावरा कोश', हरदेव बाहरी कृत 'प्रसाद साहित्य कोश', नरोत्तम स्वामी कृत 'राजस्थानी कहावतें', रामस्वरूप शास्त्री कृत 'आदर्श हिंदी-संस्कृत कोश' डॉ. पूरनचंद टंडन एवं डॉ. हरीश कुमार सेठी कृत 'सृष्टि हिंदी शब्दकोश'आदि। आजकल अन्य कोशों के साथ-साथ पारिभाषिक कोश का निर्माण विशेष रूप से चल

रहा है। इस संदर्भ में तकनीकी एवं पारिभाषिक शब्दावली आयोग द्वारा विविध ज्ञानानुशासनों से संबंधित विविध कोश प्रकाशित किए गए हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि कोश-लेखन की परंपरा अत्यंत प्राचीन एवं समृद्ध है। संस्कृत वाङ्मय में निघंटु के रूप में वैदिक मंत्रों की व्याख्या का जो रूप विकसित हुआ वही अमर कोश तक आते-आते शब्दार्थ संकलन एवं पर्याय संकलन का एक सुदृढ़ रूप बन गया। संस्कृत कोश-लेखन की परंपरा में शब्द संकलन से लेकर उनकी व्याख्या तक के रूप प्रचलित रहे हैं। हिंदी कोश-परंपरा का सूत्रपात 9वीं शताब्दी से ही देखने को मिलता है जिसमें पालि, प्राकृत, अपभ्रंश एवं संस्कृत के कोशों की भरमार रही है। तत्पश्चात् मध्यकालीन कोशों में हिंदी-उर्दू मिश्रित कोशों की परंपरा का विधान आरंभ होता है। इन कोशों में संस्कृत की पद्धति के साथ-साथ फ़ारसी शैली का समन्वय देखा जा सकता है। आधुनिक हिंदी कोश अंग्रेजी, अरबी एवं तत्सम प्रधान शैली के समन्वित रूपों से निर्मित हैं। इन कोशों में पाश्चात्य एवं भारतीय चिंतन का सुंदर समन्वय है। कोश की व्यापकता एवं विशालता का परिचय आजकल के कोश ही दे रहे हैं।

❑

संदर्भ

1. मानक अंग्रेजी-हिंदी कोश, भूमिका पृष्ठ 8 से उद्धृत।
2. ऋग्वेद, 10/163
3. यजुर्वेद, 27/45
4. डॉ. भोलानाथ तिवारी, कोश-विज्ञान, पृष्ठ 89 से उद्धृत।
5. उमाशंकर शर्मा, हिंदी निरुक्त, पृष्ठ 19
6. डॉ. भोलानाथ तिवारी, कोश-विज्ञान, पृष्ठ 90
7-8. अनुवाद (पतंजलि कुमार भाटिया, लेख – संस्कृत परंपरा : एक विहंगावलोकन), कोश-विशेषांक, भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली, अंक 94-95 पृष्ठ 28 एवं 36
9. डॉ. भोलानाथ तिवारी, कोश-विज्ञान, पृष्ठ 97
10. युगेश्वर सिंह, हिंदी कोश-विज्ञान का उद्‌भव और विकास, पृष्ठ 124 से उद्धृत।
11-12. डॉ. भोलानाथ तिवारी, कोश-विज्ञान, पृष्ठ 15 एवं 111

शिवम शर्मा

तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की भूमिका

(तमिल उपन्यास 'ओरु कावेरियाई पोल' के हिंदी अनुवाद 'एक कावेरी-सी' के विशेष संदर्भ में)

तुलनात्मक साहित्य का लक्ष्य विस्तृत संदर्भ में साहित्य का सामाजिक-सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन करना है। यह अध्ययन एक से अधिक भाषाओं के साहित्य को, खासकर वे साहित्य जो उस भाषाई समाज से बाहर विकसित हो रहे हैं, लेकर किया जाता है। वास्तव में ''तुलनात्मक अध्ययन का मूल उद्देश्य एक विस्तृत परिप्रेक्ष्य में विभिन्न भाषाओं के साहित्यों का अध्ययन है जिससे कि उसका उचित अभिज्ञान या रसास्वादन हो सके तथा उन भाषाओं के साहित्य के बारे में एक समुचित विचारधारा का विकास हो।''[1]

वस्तुतः तुलनात्मक साहित्य विविध साहित्यों के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन है – ''The Object of comparative literature is essentially the study of diverse literatures in their relations with one other.''[2] मैक्समूलर ने भी माना है कि ''सभी उच्चतर ज्ञान की प्राप्ति तुलना पर ही आधारित है।''[3] किसी भी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन संस्कृति का सार प्रदान करता है – ''It grants essence of our culture.''[4] इस तुलनात्मक अध्ययन का केंद्रीय बिंदु तुलना है क्योंकि यही तुलना समग्रता को प्रदान करती है – "Comparison bestows perfections.''[5]

यह तुलना किसी एक भाषा, साहित्य या राष्ट्र तक ही सीमित नहीं होती है क्योंकि रेमार्क ने माना है कि – ''तुलनात्मक साहित्य एक राष्ट्र के साहित्य की परिधि से परे दूसरे राष्ट्रों के साहित्य के साथ तुलनात्मक अध्ययन है। यह अध्ययन कला, इतिहास, समाजविज्ञान, धर्मशास्त्र आदि ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में आपसी संबंधों का भी अध्ययन है।''[6] विविध भाषा-साहित्यों की तुलना करने से प्राप्त उसकी समानताओं के अनुसंधान

से भारत की सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं भावात्मक एकता का स्पष्टीकरण हो जाता है। इसी भावात्मक एकता में अनुवाद की उपादेयता उल्लेखनीय है। वास्तव में अनुवाद ही इस अनुशासन की आधार-पीठिका है और आज के संदर्भ में सांस्कृतिक अध्ययन के अंतर्गत अनुवाद ने एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है।[7] इस पृष्ठभूमि में विश्व साहित्य के लिए गेटे की पुकार उचित ही नहीं अनिवार्य भी है – ''बीती सदियों के पाठकों की तुलना में बीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण के पाठक अनेक साहित्य के बारे में अधिक जानते हैं। विभिन्न राष्ट्रों के उल्लेखनीय साहित्यिक ग्रंथों के अनुवाद की सुलभता सहृदय समाज की साहित्यिक रुचि की उदाहरणतया और व्यापकता का सबसे बड़ा कारण हो सकी।''[8] ग्राह्म हॉफ ने विस्तारपूर्वक विवेचन करते हुए यह स्पष्ट किया है कि किस प्रकार नार्थ, पोप, एल्फ्रेड, ट्यूडर तथा आगस्टन जैसे अनुवादकों ने अनुवाद के माध्यम से अंग्रेजी साहित्य के क्षेत्र में साहित्य सिद्धांत, साहित्यालोचन तथा साहित्येतिहास को नया रूप दिया। (1961-71)[9]

इसके अतिरिक्त ड्राइडन ने 'फेवेल्स की भूमिका' में अनुवाद तथा रूपांतरण के इतिहास के साथ तुलनात्मक आलोचना के निकट संबंध को स्पष्ट किया है – ''अनुवाद करने वाला अपनी भाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा की साहित्यिक रचनाएँ पढ़ता है और उसे अनुभव होता है कि ये उत्कृष्ट रचनाएँ अपनी भाषा में आएँ तो भाषा समृद्ध होगी। इस चिंतन से प्रभावित होकर वह अनुवाद कार्य करता है और इस तरह तुलनात्मक अध्ययन अपने आप होने लगता है।''[10] अध्ययन की प्रारंभिक अवस्था और बाद में अंतिम निष्कर्ष में पहुँचाने के लिए उसे अनुवादों से सहायता मिलती है और अंततः मूल अध्ययन का संपूर्ण चरित्र उसके सम्मुख उद्घाटित हो जाता है।[11]

सुसेन बेसनेट ने तो यहाँ तक कह डाला कि – ''तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद विज्ञान के संबंध पर पुनर्विचार करने का समय आ गया है। अनुवाद अंतःसांस्कृतिक अध्ययन पर आधारित विषय है। यह कुछ गंभीर प्रविधि देता है। सिद्धांत एवं वर्णन दोनों में यह अनुभव होता है। अतः तुलनात्मक साहित्य विधा के रूप में यह कम दिखता है, किसी अन्य विषय की शाखा-सा अनुभव होता है।''[12]

भारतीय संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की इसी भूमिका की ओर लक्ष्य करते हुए डॉ. इंद्रनाथ चौधुरी ने लिखा है कि, ''यह एक संयोगात्मक तथ्य है कि भारतीय सभ्यता बहुभाषिक है और शताब्दियों से यह ऐसी ही रही है और इसके परिणामस्वरूप साहित्य के भारतीय विद्यार्थी के लिए एक से अधिक भारतीय भाषाओं का ज्ञान अपने आप में बहुत ही स्वाभाविक रहा है। .....जबकि तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में दो भाषाओं के ज्ञान के अतिरिक्त साहित्य के विभिन्न पक्षों के विश्लेषण के लिए विभिन्न

देशों की भाषाओं में किए गए अनुवादों को महत्व दिया जा रहा है। भारत के संदर्भ में अनुवाद का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण है।''[13] बुद्धदेव बसु ने भी लिखा है कि निर्विवाद रूप से साहित्य का अध्ययन करना है तो उसके लिए अनुवाद अपरिहार्य है।

इन विश्लेषणों से पूर्णतया स्पष्ट है कि तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके अतिरिक्त सबसे महत्वपूर्ण बात यह भी है कि किसी भी व्यक्ति की भाषा सीखने की अपनी सीमा होती है और फलतः उसे बृहद स्तर पर अध्ययन विश्लेषण के लिए अनुवाद का आश्रय लेना ही पड़ता है तथा हम जिन क्षेत्रीय भाषाओं का ज्ञान नहीं रखते उसके भी साहित्य का अध्ययन अनुवाद के माध्यम से किया जा सकता है। विदेशों में यह तरीका बड़ा ही लोकप्रिय है। भारत में भी इस तरह से कार्य लिया जा सकता है।[14]

सन 1956 में साहित्य अकादमी की स्थापना ने भारत में तुलनात्मक साहित्य को नई दिशा दी। .....अकादमी के प्रयत्न से प्रमुख भारतीय भाषाओं की रचनाओं का अनुवाद हिंदी व अंग्रेजी में होने लगा।[15]

प्रस्तुत शोधपरक आलेख में त्रिपुर सुंदरी लक्ष्मी द्वारा लिखे गए भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से ओत-प्रोत एवं साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत तमिल उपन्यास 'ओरु कावेरियाई पोल' के हिंदी अनुवाद 'एक कावेरी-सी' का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास का अनुवाद डॉ. सुमिल अय्यर ने किया है।

आज भारतीय भाषाओं के साहित्यों की परस्पर तुलना भावात्मक एकता के लिए अनिवार्य हो चली है। तुलनात्मक साहित्य के भारतीय विशेषज्ञ स्वप्न मजूमदार ने जादवपुर विश्वविद्यालय में सन 1983 में व्याख्यान देते हुए कहा था – ''किसी तीसरी भाषा में अनूदित या सुनी-सुनाई पश्चिमी साहित्यिक कृतियों एवं विचारधाराओं से भारतीय भाषाओं के साहित्य की तुलना करने के बजाय भारतीय भाषाओं के ही साहित्यों की परस्पर तुलना से एक भारतीय तुलनात्मक साहित्य हमारे लिए वाँछनीय है।''[16] अतः तुलनात्मक अध्ययन के केंद्र में भारतीय भाषाओं का चयन वर्तमान में सर्वथा उपयुक्त है।

'तमिल' और 'हिंदी' भारत की दो श्रेष्ठ भाषाएँ हैं। जहाँ तमिल द्रविड़ भाषा परिवार की अन्यतम भाषा है वहीं हिंदी भारतीय आर्य परिवार की। वैसे आर्य एवं द्रविड़ परिवार की भाषाओं का यह पारिवारिक विभाजन विदेशी विद्वानों ने किया है। इस विभाजन की ऐतिहासिक मीमांसा की जाए तो निष्कर्ष रूप में हमें दोनों परिवारों को भारतीय परिवार के रूप में मानना होगा। तुलनात्मक अध्ययन ही हमारी मूल धारणाओं को ठीक-ठीक पहचानने में सहायक हो सकता है। ऐसे प्रयास जितने अधिक होंगे राष्ट्र की मूल चेतना

उतनी ही उजागर होगी और इस तुलनात्मक अध्ययन में अनुवाद एक ऐसा सेतु है जो सबसे अधिक कारगर सिद्ध होगा।

प्रसिद्ध अनुवाद विज्ञानी रोमन याकोब्सन ने अनुवाद के तीन प्रकारों की चर्चा की है – अंतःभाषिक अनुवाद (Inter-lingua Translation); आंतर्भाषिक अनुवाद (Inter-lingua Translation); और अंतर-प्रतीकात्मक अनुवाद (Inter-semiotic Translation)।[17]

प्रस्तुत उपन्यास 'एक कावेरी-सी' 'अंतरभाषिक अनुवाद' के अंतर्गत आता है। अंतरभाषिक अनुवाद में प्रायः तीन स्थितियाँ देखी जा सकती हैं –

1. मूल पाठ और अनूदित पाठ एक ही व्यक्ति द्वारा रचा और अनूदित किया जाता है। जैसे – अज्ञेय ने 'सोनमछली', 'एक बूँद सहसा उछली' आदि अपनी कई रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद किया है।
2. दूसरी स्थिति में मूल पाठ के रचयिता और अनुवादक दो भिन्न-भिन्न व्यक्ति होते हैं।
3. तीसरी स्थिति में मूल पाठ के अनुवाद भिन्न-भिन्न अनुवादकों द्वारा किए जाते हैं। जैसे – उमर खैय्याम की रुबाइयों का अनुवाद : सुमित्रानंदन पंत, मैथिलीशरण गुप्त, केशव प्रसाद पाठक और हरिवंशराय बच्चन आदि ने किया है।

'ओरु कावेरियाई पोल' के अनुवाद में उपर्युक्त दूसरी स्थिति विद्यमान है। यहाँ एक तथ्य उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त अनुवाद के प्रकारों एवं इन प्रकारों की विभिन्न स्थितियों में तुलनात्मक अध्ययन अनिवार्य है। अनुवाद की दृष्टि से जब भिन्न भाषाओं की तुलना स्थिति का विश्लेषण करते हुए अनुवादक अनुवाद की ओर प्रवृत्त होता है तो पाठ के विभिन्न स्तरों पर अनुवादनीयता और अननुवादनीयता की स्थिति बनती है। अर्थात् किसी स्तर पर अनुवाद की पूर्ण संभावना (+) होती है, कहीं आंशिक (+, –) और कहीं एकदम नहीं (–)।[18] इस आधार पर यदि 'ओरू कावेरियाई पोल' के हिंदी अनुवाद का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो निम्नलिखित स्तरों पर अनुवाद की पूर्ण संभावना और आंशिक संभावना आदि बनती है :

- कथानक (अफ्रीका के तमिल प्रवासियों की कथा) + अनुवाद
- संप्रेषण + अनुवाद
- विधाएँ/संरचना + – अनुवाद
- सांस्कृतिक गुण (Cultural traits) – अनुवाद
- बुनावट – अनुवाद

लक्ष्मी के इस तमिल उपन्यास 'ओरु कावेरियाई पोल' (एक कावेरी-सी) दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी तमिलवासियों की जीवन-गाथा है। ये वे प्रवासी तमिल हैं जो लगभग डेढ़

सौ वर्ष पहले मजदूर (दास) के रूप में अफ्रीका गए थे। आज वे व्यापार और अन्य कारोबारों में अच्छे पदों पर हैं। उपन्यास की केंद्रीय पात्र है – कावेरी। संपूर्ण कथा का ताना-बाना इसी के इर्द-गिर्द बुना गया है। उपन्यास के पूर्वार्द्ध में भारतीय संस्कृति का अफ्रीका में संरक्षण तथा उत्तरार्द्ध में कावेरी का भारत आकर यहाँ की सभ्यता-संस्कृति से साक्षात्कार वर्णित है। इस उपन्यास का अनुवाद संदर्भित तुलनात्मक अध्ययन विश्लेषण जिन दो बिंदुओं के अंतर्गत किया जा सकता है, वे हैं – (1) तमिल और हिंदी भाषाई समाज के सांस्कृतिक एवं भावात्मक एकता के संदर्भ में; और (2) अफ्रीका में भारतीय संस्कृति के संरक्षक एवं प्रभाव के संदर्भ में।

तमिल और हिंदी भाषाई समाजों के सांस्कृतिक एवं भावात्मक एकता के संदर्भ में इस उपन्यास का तुलनात्मक विवेचन अत्यंत प्रासंगिक है। हिंदी भाषाई समाज आर्य सभ्यता की एक प्राचीन एवं वृहद सभ्यता-संस्कृति से आच्छादित है। पर वह द्रविड़ सभ्यता एवं संस्कृति के कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों से अछूता है। प्रस्तुत उपन्यास के हिंदी अनुवाद के अध्ययन-मनन से इन अछूते तथ्यों से बड़ी सहजता से परिचय प्राप्त कर भावात्मक एकता स्थापित की जा सकती है। प्रसिद्ध अनुवाद विज्ञानी यूजीन ए. नाइडा ने पाँच प्रकार की संस्कृतियों की चर्चा की है –

1. परिसर या पर्यावरण संस्कृति (Ecological Culture)
2. वस्तु संस्कृति (Material Culture)
3. सामाजिक संस्कृति (Social Culture)
4. धार्मिक संस्कृति (Religious Culture)
5. भाषिक संस्कृति (Linguistics Culture)

'ओरु कावेरियाई पोल' में पर्यावरण या परिसर संस्कृति के अंतर्गत तमिलनाडु के प्राकृतिक वातावरणों (नारियल के बागों, समुद्र तटों, कावेरी के चौड़े पाटों, कन्याकुमारी में उगते और डूबते सूर्य के सौंदर्य) का चित्रण है। वस्तु संस्कृति के अंतर्गत तमिलों द्वारा दैनिक जीवन के उपयोग में लाई जाने वाली वस्तुओं (चंदन, सिल्क, वस्त्रों, गजरों, इडली, डोसा, सांभर आदि) का उल्लेख है। सामाजिक संस्कृति के अंतर्गत तमिलनाडु की स्वतंत्रता पूर्व सामाजिक दशा एवं वर्तमान सामाजिक दशा (रोजगार की स्थिति, जीवन-शैली, व्यक्तियों के व्यवहार आदि) का वर्णन है। धार्मिक संस्कृति में वहाँ के मठों, मंदिरों, शिल्पों का वर्णन है जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं –

- काँचीवरम का एकेश्वर मंदिर, पत्थर शिल्पों, कामाक्षी, यम्मन, वरदराजन, कुमार, पेरूमाल्स आदि के मंदिर।
- तिरुवेंदूर मुरुगन को भभूत का अभिषेक।

- महाबलीपुरम का शिल्प।
- सूचीन्द्रम का स्तूप, मंदिर और हनुमान मूर्ति की विशालता।
- शीरकाषी का तोणियम्पर मंदिर।

इन सांस्कृतिक सौंदर्यों को देखकर उपन्यास की नायिका कावेरी कहती है – ''अपने देश का दूसरा पहलू इतना सुंदर, इतना अच्छा, इतना प्यार भरा, इतना सुसंस्कृत और आध्यात्मिक प्रकाश से युक्त है – यह भी मैने देख लिया।''

अंत में भाषिक संस्कृति के अंतर्गत तमिलों का भाषाई प्रेम उल्लेखनीय है – 'तमिल के लोग कहीं भी रहें, मातृभाषा कैसे भूल सकते हैं?''

'एक कावेरी-सी' के अध्ययन से हिंदी के पाठक तमिलनाडु की इन संस्कृतियों का सहजता से परिचय प्राप्त कर सकते हैं। वे गंगा नदी, उसके किनारे बसे हुए शहर वाराणसी और वहाँ की बनारसी साड़ियों से कावेरी नदी और उसके किनारे बसे मंदिरों के शहर काँचीवरम तथा वहाँ की सिल्क साड़ियों में समानता स्थापित कर भावात्मक एकीकरण का अनुभव कर सकते हैं। काँची के वर्णन में लेखिका का यह कथन उल्लेखनीय है – ''काँची तो मंदिरों के लिए ही नहीं, बल्कि अपने बुनकरों के लिए आध्यात्मिक, राजनीतिक एवं ऐतिहासिक महत्व के लिए प्रसिद्ध है।''

अनुवाद संदर्भित तुलनात्मक अध्ययन के द्वितीय बिंदु में अफ्रीका में भारतीय संस्कृति के संरक्षण एवं प्रभाव को विश्लेषित किया जा सकता है। आज से लगभग 150 वर्ष पूर्व तमिलनाडु, सूरत, कलकत्ता आदि स्थानों से ठेकेदारों के माध्यम से अंग्रेजों के द्वारा गन्ने के खेतों में काम कराने के लिए भारतीयों को ले जाया गया। (ठीक उसी प्रकार जैसे अफ्रीका के नीग्रो लोगों को अमेरिका में दास बनाकर ले जाया गया था।) इन्हें अफ्रीका में 'इन्टेसर्ड लेबरर' के नाम से जाना जाता है तथा स्वेच्छा से पुजारी, अध्यापन पेशों के लिए गए लोगों को 'पैसेंजर इंडियन' के नाम से जाना जाता है। सुविधा की दृष्टि से दोनों के लिए अलग-अलग कानून हैं। 'इन्टेसर्ड लेबरर' आज वहाँ अच्छे पदों (डॉक्टर, वकील, व्यवसायी) पर कार्यरत हैं। इन भारतीयों ने वहाँ भारतीय भाषाओं, खान-पान शैलियों, पूजा-पाठों, त्योहारों, व्रतों तथा वेशभूषा आदि को पिछले कई वर्षों से संरक्षित कर रखा है और उनका आचरण-व्यवहार भी कह रहे हैं। नवरात्र पूजा, सरस्वती पूजा, हनुमान के लाल झंडों का चित्रण उपन्यास के कथानक में स्पष्ट है। जगह-जगह अफ्रीकाई प्राकृतिक सौंदर्य का भारतीय प्राकृतिक सौंदर्य के समानांतर वर्णन किया गया है। गांधी के पथानुगामी के रूप में उपन्यास के नायक दामोदर का चित्रण किया गया है। वहाँ डर्बन शहर में गांधी संतमिल पाठशाला, गांधी ठाकुर पुस्तकालय, फिनिट सेंटलमेंट आश्रम (अब म्यूजियम के रूप में) की स्थापना भी भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रभाव

से स्थापित है। बैतलीश्वर मंदिर (तमिलनाडु) की याद में केप प्रांत में अमकेनी नदी के तट पर वैद्यनाथ मंदिर बनाया गया है।

निष्कर्षतः तुलनात्मक साहित्य के स्वरूप और उद्देश्यों तथा अनुवाद सिद्धांत, प्रकारों को केंद्र में रखते हुए 'ओरु कावेरियाई पोल' के हिंदी अनुवाद 'एक कावेरी-सी' के अनुवाद संदर्भित तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की अत्यंत महत्वपूर्ण केंद्रीय भूमिका है। भाषाई भूमंडलीकरण के दौर में अनुवाद की इस भूमिका पर और ज्यादा अध्ययन-विश्लेषण की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त शोध के लिए भी यह विषय अत्यंत प्रासंगिक है।

❑

संदर्भ

1. तुलनात्मक अध्ययन : भारतीय भाषाएँ एवं साहित्य, सं. राजूरकर, राजमल बोरा, पृष्ठ 120
2. तुलनात्मक साहित्य की भूमिका, इंद्रनाथ चौधुरी, पृष्ठ 9
3. तुलनात्मक अनुसंधान और उसकी समस्याएँ, सं. डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति
4. Sir Jams, Research and Search, page-1
5. Henry Jorge, Research Methodology
6. तुलनात्मक साहित्य की भूमिका, इंद्रनाथ चौधुरी, पृष्ठ 5
7. तुलनात्मक साहित्य : भारतीय परिप्रेक्ष्य, इंद्रनाथ चौधुरी, भूमिका, पृष्ठ 10
8. तुलनात्मक साहित्य, एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, पृष्ठ 12
9. भारतीय साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेंद्र
10. तुलनात्मक अध्ययन : भारतीय भाषाएँ एवं साहित्य, सं. राजूरकर, राजमल बोरा
11. The first law of translation is clear; nothing can be taken as final, Giferd, 1969, page-99
12. Comparative literature : A Critical Introduction, Susen Basenet.
13. तुलनात्मक साहित्य : भारतीय परिप्रेक्ष्य, इंद्रनाथ चौधुरी, पृष्ठ 120-121
14. तुलनात्मक साहित्य, एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, पृष्ठ 22
15. तुलनात्मक साहित्य, एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, पृष्ठ 20
16. Comparative literature : Indian Dimensions, Swapan Mazumdar.
17. Roman Jakobson, On Linguistic Aspect of Translation in R.A. Brower, (Ed.), On Translation, 1959, page 232
18. अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान : सिद्धांत एवं प्रयोग, सं. सूरजभान सिंह, दिलीप सिंह

छबिल कुमार मेहेर

विधिक सामग्री का अनुवाद

विधि और प्रशासनिक सामग्री का अनुवाद मूलतः भारतीय संविधान के राजभाषा विषयक प्रावधानों के क्रियान्वयन का एक हिस्सा है। इस हेतु महामहिम राष्ट्रपति महोदय के हस्ताक्षर से सन् 1952, 1955 और 1960 में विशेष आदेश जारी किए गए। 1952 के आदेश में राज्यपाल, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के नियुक्ति पत्रों को अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी में जारी करना तथा हिंदी अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूपों के साथ-साथ देवनागरी अंकों के प्रयोग को भी सुनिश्चित किया गया। 1955 के आदेश में प्रशासनिक रिपोर्ट, संसद में प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्टें, सरकारी संकल्प और विधायी अधिनियम, संधियाँ और करार, अन्य देशों की सरकारें और उनके दूतों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ पत्र-व्यवहार आदि सरकारी प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी का प्रयोग भी प्राधिकृत किया गया। 1960 के आदेश में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित बातों का भी प्रावधान किया गया :

1. वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के निर्माण के लिए शिक्षा मंत्रालय को एक स्थायी आयोग स्थापित करना चाहिए।
2. शिक्षा मंत्रालय सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों के अतिरिक्त सभी मैनुअलों तथा कार्यविधि साहित्य का अनुवाद हाथ में ले और भाषा में एकरूपता सुनिश्चित करने की दृष्टि से यह काम एक ही अभिकरण को सौंपा जाए।
3. एक मानक विधि शब्दकोश बनाने, हिंदी में विधि के पुनः अधिनियमों और विधि शब्दावली के निर्माण के लिए विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विधि-विशेषज्ञ का एक स्थायी आयोग स्थापित किया जाए।

इसके परिणामस्वरूप शिक्षा मंत्रालय के अंतर्गत वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग गठित किया गया और विधि मंत्रालय के अंतर्गत राजभाषा (विधायी) आयोग

की स्थापना सन् 1961 के जून मास में हुई। इसके पश्चात् विधायी आयोग ने अंग्रेजी-हिंदी विधिक शब्दावली तैयार की और विधिक प्रारूपण के माने हुए सिद्धांतों को ध्यान में रखकर वह प्रमुख केंद्रीय अधिनियमों के प्राधिकृत हिंदी पाठ तैयार करने में जुट गया। ''इस अनुवाद प्रक्रिया में आयोग ने इस बात पर बराबर ध्यान रखा कि अनुवाद में मूल और मूल अधिनियम के अर्थ में भेद न पड़ने पाए। हिंदी तथा विभिन्न राज्यों की राजभाषाओं के प्रतिनिधियों के सहयोग और सहायता से ऐसे पर्याय चुने गए जिनकी उस विधि के संदर्भ में वही अर्थ-व्याप्ति हो जो उस अंग्रेजी पारिभाषिक शब्द की थी जिसके लिए चुने गए शब्द का प्रयोग किया जाना था। और यह बात पूरे विधिक सामग्री पर समान रूप से लागू होती है।''

राजभाषा (विधायी) आयोग की विधि शब्दावली

राजभाषा (विधायी) आयोग की 'विधि शब्दावली' का छठवाँ संस्करण प्रकाशित हो चुका है जिसमें लगभग एक लाख शब्दों को स्थान मिल चुका है। ''इनमें जिन अंग्रेजी शब्दों और पदावलियों को शामिल किया गया उनका अंग्रेजी में वह अर्थ दिया गया है जिसमें वे संबद्ध अधिनियमों में प्रयुक्त हुए या हुई हैं। अंग्रेजी अर्थ के पश्चात् वह प्रमुख पर्याय दिया गया है जिनका प्रयोग संबद्ध अधिनियम में किया गया है। किंतु साथ ही कहीं-कहीं कोष्ठक में दूसरे पर्याय भी दिए गए हैं जो आयोग ने हिंदी से भिन्न भाषाओं के प्रतिनिधियों के इस मत के आधार पर अपनाए कि जो प्रमुख पर्याय तय किए गए हैं उनके स्थान में, उन अन्य भाषाओं में उन दूसरे पर्यायों का प्रयोग भी किया जा सकता है। इसी आधार पर कहीं-कहीं वे पर्याय भी दिए गए हैं जो हिंदी भाषी क्षेत्रों में चलते हैं। ...आयोग का प्रयास बराबर यह रहा है कि वे ही पर्याय अपनाए जाएँ जो भारत की प्रमुख भाषाओं में से अधिकांश में आत्मसात किए जा सकें। आयोग ने किसी भी उपलब्ध पर्याय की केवल इस कारण उपेक्षा नहीं की कि वह हिंदी भाषा से भिन्न भाषा का शब्द है। किसी भाषा स्रोत से भी आए जो शब्द हिंदी में आत्मसात हो चुके हैं यदि वे शब्द अन्य भाषाओं को भी मान्य हुए तो उन्हें आयोग ने अपना लिया। इस प्रकार अपील, समन, वारंट आदि प्रचलित शब्द ज्यों के त्यों रख लिए गए हैं। विधिक विचारों में जो सूक्ष्म अंतर होते हैं यदि उनको अभिव्यक्त करने के लिए हिंदी में शब्द नहीं मिले तो उनमें से कई के लिए भारत की अन्य भाषाओं से भी शब्द लिए गए हैं। हो सकता है कि आरंभ में ये शब्द हिंदी भाषियों को इस कारण सहज बोध न हों कि वे उनसे परिचित नहीं हैं। किंतु जो भी शब्द उन भाषाओं से लिए गए हैं वे ऐसे हैं कि वे सहज ही हिंदी में पचाए जा सकते हैं और कुछ समय के प्रयोग से ही हिंदी भाषा में प्रचलित हो जाएँगे।'' ('विधि शब्दावली' के प्रथम संस्करण

की भूमिका से) क्योंकि भाषा प्रयोगशाला में नहीं, प्रयोग से ही चमकती है। उदाहरण के तौर पर, hypothecation और encumbrance के लिए तमिल भाषा से गृहित क्रमानुसार 'आडमान' व 'विल्लंगम' दोनों शब्द हिंदी अनुवाद में प्रचलित और स्वीकृत हो गए हैं। परंतु distress के लिए तय किया गया मलयालम का 'करस्थम्' शब्द अनुवाद में अपना स्थान नहीं बना पाया है।

विधि की भाषा की विशिष्टता

'विधि' की भाषा का अपना वैशिष्ट्य होता है। न्याय-भाषा में द्वयर्थकता अथवा संदिग्धार्थकता नहीं होनी चाहिए। इसके मूल में यह कारण निहित है कि अर्थ निर्णय में कहीं, किसी प्रकार की भ्राँति न हो। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी का एक छोटा-सा वाक्य 'He should be hanged' को लेते हैं। इस वाक्य से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि 'उसे लटकाया जाए' परंतु इसमें यह नहीं कहा गया है कि 'कब तक लटकाया जाए'। कहने की जरूरत नहीं कि इस संदिग्धता के कारण ही एक बार मौत की सजा पाए एक मुजरिम को मुक्ति मिल गई थी। सूली पर टाँगते ही मुजरिम कह उठा 'बस हो गया क्योंकि जज ने केवल लटकाने की सजा सुनाई है'। इसके बाद ही उक्त अंग्रेजी वाक्य को लिखा जाने लगा – 'He sould be hanged till death'।

सरलता, स्पष्टता, संक्षिप्तता, अभिधार्थपरकता तथा पारदर्शिता न्याय की भाषा की उल्लेखनीय विशेषताएँ बतलाई गई हैं। विधि की भाषा की विशेषता पर विचार करते हुए राजभाषा आयोग ने यह कहा था : ''कानून की भाषा सुनिश्चित, संक्षिप्त और सुस्पष्ट होनी चाहिए। देश-भर के अनेक न्यायालयों में इस भाषा की व्याख्या की जाएगी जो मुख्यतः कानूनों में प्रयोग में लाई हुई भाषा के व्याकरण-सम्मत सामान्य अर्थ के आधार पर ही विचार करेंगे, उन शब्दों में छिपे हुए उद्देश्यों या अभिप्राय के आधार पर नहीं। जहाँ तक विचार-विमर्श की भाषा का संबंध है, अपने विचार प्रकट करने में संबद्ध वक्ताओं की सुविधा और सुगमता को ध्यान में रखना अधिक महत्वपूर्ण है। इस प्रकार कानूनों या न्याय की भाषा में निश्चितता, संक्षिप्तता, पारदर्शिता, अभिधार्थपरकता और स्पष्टता होती है।'' ('विधि शब्दावली' के चतुर्थ संस्करण की भूमिका से)

विधिक अनुवाद

'विधि' शब्द अंग्रेजी के 'लॉ' का पर्याय है। विधिक अनुवाद में सबसे बड़ी समस्या मूल के आशय को हू-ब-हू अभिव्यक्ति प्रदान करना है। विधि के आशय को सुनिश्चित रखने के लिए एक संकल्पना के लिए एक ही पर्याय रखा गया है। जैसे – Act के लिए 'अधिनियम', rule के लिए 'नियम', sub-rule के लिए 'उपनियम', regulation के लिए 'विनियम' और statue के लिए 'परिनियम' तय किया गया है। ऐसे ही survey

के लिए 'सर्वेक्षण', prospect के लिए 'पूर्वेक्षण', inspect के लिए 'निरीक्षण', super-intend के लिए 'अधीक्षण' निश्चित किया गया है। अतः अनुवाद करते समय केवल सुनिश्चित पर्याय को चुनना होगा। परंतु अनुवाद एक ऐसा कर्म है, जिसमें कभी-कभी अकेले शब्द का विचार करके अनुवाद की गति को आगे बढ़ाया नहीं जा सकता। हो सकता है प्रसंगानुसार हमें एक ही शब्द के अलग-अलग पर्याय चुनना पड़े, जैसा कि हमें आम अनुवाद कर्म में चुनना पड़ता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के charge शब्द को लेते हैं :

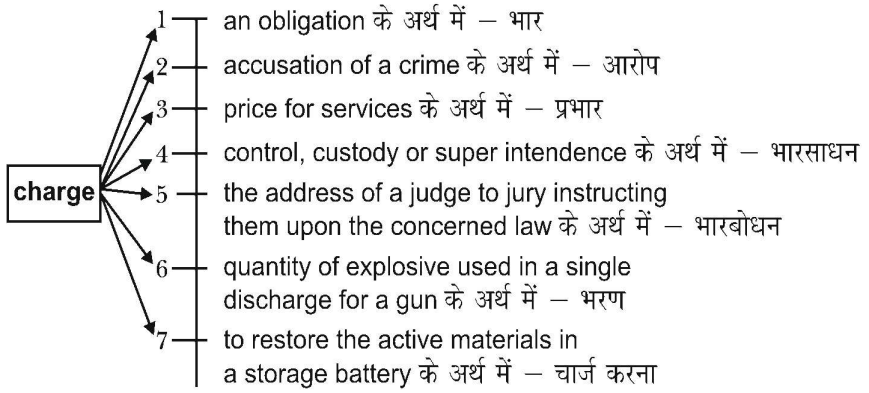

इसी प्रकार की भिन्न अर्थ छाया वाले शब्दों का उपयोग प्रशासनिक अनुवाद में भी करना पड़ता है। अनेक ऐसे शब्द हैं जिनका प्रशासनिक और विधिक अर्थ भिन्न-भिन्न ग्रहण किया गया है। परंतु विधिक अनुवाद की तुलना में प्रशासनिक अनुवाद में अपेक्षाकृत सरल शब्दों का प्रयोग होता है, जो निम्नलिखित शब्दों से स्पष्ट हो जाएगा :

मूल अंग्रेजी शब्द	**प्रशासनिक अर्थ**	**विधिक अर्थ**
acknowledgement	पावती	अभिस्वीकृति
appearence	हाज़िरी	उपसंजाति
affirmation	अभिपुष्टि	प्रतिज्ञान
adjudge	ठहराना	न्यायनिर्णीत करना
acquittance	भरपाई	निस्तारण
censure	निंदा	परिनिंदा
disability	अपंगता	निःशक्तता
dissent	असहमति	विसम्मति
earnest money	बयाना	अग्रिम धन
enjoin	आदेश देना	आदेश देना

विधिक सामग्री के अंतर्गत विधेयक, अधिनियम आदि आते हैं। इनका अनुवाद सटीक और प्राविधिक होने चाहिए तथा भाषा में सुनिश्चितता, एकार्थता और स्पष्टता होनी चाहिए। विधिक अनुवाद में हमें शब्दों का चयन विधायी आयोग की विधि शब्दावली से ही करना चाहिए। शब्दावली में आए शब्द कहीं-कहीं अतिसंस्कृतनिष्ठ होने से जटिल हो गए हैं। परंतु विधि में 'जटिलता' को गुण के रूप में स्वीकार किया जाता है। अतः इसका अनुवाद भी अक्सर जटिल रूप लेकर हमारे सामने आता है। फिर भी अनुवाद में हमें अपेक्षाकृत सरल भाषा का सरलीकृत रूप को प्रयोग में लाना चाहिए। उदाहरण के लिए निम्नलिखित अंग्रेजी वाक्य और उसका हिंदी अनुवाद देखिए :

मूल वाक्य : 'The regulation shall come into force in the 1st day of January 2011.'

मूलाधारित अनुवाद : 'ये विनियम वर्ष 2011 के जनवरी माह की पहली तारीख को प्रभावी होंगे।'

सहज अनुवाद : 'ये विनियम 1 जनवरी 2010 से लागू होंगे।'

इसके अलावा शब्दों के रूपों के परिवर्तन पर भी ध्यान देना चाहिए। अगर हम bonafide के लिए 'सद्भाव' का प्रयोग करते हैं तो bonafides के लिए 'सद्भावी' करना चाहिए।

विधिक अंग्रेजी में लैटिन, फ्रेंच आदि की शब्दावली का प्रयोग अक्सर देखने को मिलता है। इसके लिए विधि शब्दावली में लैटिन, फ्रेंच आदि की शब्दावलियों की एक अंग्रेजी-हिंदी सूची भी दी गई है। इस प्रकार की गैर-अंग्रेजी शब्दावलियों का मूल अर्थ समझकर उसे सहज किंतु सटीक अर्थ का पर्याय अनुवाद में प्रयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए कुछ शब्द यहाँ दिए जा रहे हैं :

falsus in uno, falsus in omnibus	–	एक बात में झूठ तो सब में झूठ
sans recourse	–	दायित्व रहित, आश्रय रहित
on ventre so mere	–	गर्भवती
sine qua non	–	अनिवार्य

कानून या विधि की भाषा में किसी भी कथ्य को सीधे-सादे ढंग से अभिव्यक्त नहीं किया जाता, बल्कि उसे कानूनी अंदाज में घुमा-फिराकर कहा जाता है। फिर विधिक भाषा के मूल अंग्रेजी का वाक्य लंबा ही होता है। एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है :

Ministry of I & B has issued Notification dated 2nd August, 2006 amending Cable Television Networks Rules, 1994 and substituting the following in sub-rule 9 of Rule 7 (Advertising Code) :

'No advertisement which violates the Code for Self-regulation in

advertising, as adopted by the Advertising Standards Council of India (ASCI), Mumbai for public exhibition in India, from time to time, shall be carried in the cable service'.

अधिकांश अनुवादक अपने-अपने अनुवादों में मूलाधारित लंबे वाक्यों का प्रयोग करते हैं, जिसके कारण अनुवाद में भी मूल की जटिलता और अटपटापन मौजूद रहता है। ऐसी जटिलता को दूर करने का एक तरीका यह हो सकता है कि हम मूल के वाक्यों को तोड़कर हिंदी अनुवाद में अपेक्षाकृत छोटे वाक्यों का प्रयोग करें, क्योंकि हिंदी भाषा में लंबे वाक्यों के प्रयोग का चलन प्रायः नहीं है। परंतु इसका खतरा यह है कि वाक्यों को तोड़ने से अभिव्यक्ति के बदलने की संभावना भी बनी रहती है। अतः विधिक अनुवाद में प्रवृत्त अनुवादकों को मूल नियम, विनियम या अधिनियम को पहले दो-तीन बार पढ़कर उसमें निहित सांविधिक अर्थ व अभिव्यक्तियों का हिंदी समतुल्य पर्यायों का पता लगाना चाहिए। जहाँ वाक्य को तोड़कर अर्थ सही निकल सकता है, वहाँ वाक्य तोड़ देना चाहिए। इस आधार पर उपर्युक्त अंग्रेजी अनुच्छेद का हिंदी अनुवाद देखिए :

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय द्वारा दिनांक 02/08/2006 को जारी अधिसूचना में केबिल टेलीविजन नेटवर्क नियमावली, 1994 में संशोधन किया गया है और इसके नियम 7 के उप-नियम 9 (विज्ञापन संहिता) में निम्नलिखित प्रतिस्थापन किया गया है :

''ऐसे विज्ञापन जो 'भारतीय विज्ञापन मानक परिषद्, मुम्बई' (ए.एस.सी.आई.) द्वारा सामूहिक प्रदर्शन के लिए समय-समय पर अंगीकृत विज्ञापन स्व-विनियम संहिता का उल्लंघन करते हैं, को भारत में केबिल सेवा के अंतर्गत प्रसारित न किया जाए।''

विधिक अनुवाद करना उतना आसान नहीं होता जितना अन्य विषयों से संबंधित सामग्री के अनुवाद में होता है, क्योंकि इसमें शब्द, अर्थ एवं अभिव्यक्ति तीनों के संयोग से जो व्यक्त होना चाहिए वह मूल के समकक्ष ही होना चाहिए। इसमें थोड़े से भी अर्थ-भेद होने से अर्थ का अनर्थ हो सकता है। अतः विधिक अनुवाद, खासकर नियम, विनियम, अधिनियम का अनुवाद, करते समय जहाँ कहीं भी शंका उत्पन्न हो उसे उच्च-स्तरीय अनुवादकों के साथ चर्चा कर उसका समाधान ढूँढ़ना चाहिए तथा जरूरत पड़ने पर उस अनुवाद का वकीलों से पुनरीक्षण (vetting) करवाना चाहिए। एक अन्य उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है :

मूल :

Appeals – person aggrieved by –

(a) an order of the registering authority rejecting his application for reg-

istration or requisting him to any to furnish any security or to comply with any term or condition (not being a prescribed term or condition) specified in the certificate issued to him or suspending or cancelling or refusing to renew the certificate issued to him; or

(b) an order of the competent authority rejecting his application for a permit or requiring him to comply with any terms or conditions (not being a prescribed term or condition) specified in the permit issued to him, or suspending or cancelling or refusing to extend the period of refusing to renew the certificate issued to him;

may prefer an appeal against such order to the central government within such period as may be prescribed.

हिंदी अनुवाद :

अपीलें – कोई ऐसा व्यक्ति जो :

(क) रजिस्ट्रीकरण के लिए उसके आवेदन को अस्वीकृत करने वाले या कोई प्रतिभूति देने के लिए उससे अपेक्षा करने वाले या उसको जारी किए गए प्रमाण-पत्र में विनिर्दिष्ट किसी निबंधन या शर्त का (जो विहित निबंधन या शर्त नहीं है) अनुपालन करने की अपेक्षा करने वाले अथवा उसको जारी किए गए प्रमाण-पत्र को निलंबित या रद्द करने वाले या उसका नवीकरण करने से इंकार करने वाले रजिस्ट्रीकर्ता प्राधिकारी के किसी आदेश से; या

(ख) किसी अनुज्ञा-पत्र के लिए उसके आवेदन को अस्वीकृत करने वाले या उसको जारी किए गए अनुज्ञा-पत्र में विनिर्दिष्ट किन्हीं निबंधनों या शर्तों का (जो विहित निबंधन या शर्त नहीं है) अनुपालन करने की अपेक्षा करने वाले अथवा उसको जारी किए गए अनुज्ञा-पत्र को निलंबित या रद्द करने वाले या उसकी विधिमान्यता की अवधि का विस्तार करने से इंकार करने वाले सक्षम अधिकारी के किसी आदेश से;

व्यथित है, वह ऐसे आदेश के विरुद्ध अपील ऐसी अवधि के भीतर, जो विहित की जाए, केंद्रीय सरकार को करेगा।

विधिक अनुवाद की चुनौतियाँ

विधि अनुवाद की वास्तविक चुनौतियों से सामना करने के लिए हमें व्यावहारिक या प्रायोगिक स्तर पर उतरना होगा। विधिक अनुवाद में सिर्फ शब्दावली (यानी मूल के अंग्रेजी शब्दों का हिंदी पर्याय), उसकी भाषा एवं प्रकृति, सामान्य कठिनाइयाँ तथा सावधानियाँ जान लेने के उपरांत क्या हम निम्नलिखित पैरा का सटीक अर्थात् मूल के आशय को व्यक्त करने वाला अनुवाद कर सकते हैं या नहीं, देखते हैं :

"The SCHEDULED TRIBE (RECOGNITION OF FOREST RIGHT) BILL, 2005 inter alia provides for the recognition and vesting of forest rights and occupation in forest dwelling Schedule Tribes who have been residing in such forest for generations but whose rights could not be recorded and for establishing a framework for recording the forest rights so vested and determine the nature of evidence required for such recognition and vesting in respect of forest land".

उपर्युक्त मूल पाठ न केवल एक लंबा वाक्य है वरन् वह एक साथ कई अर्थों को प्रतिबिंबित करने वाला भी है। अनेक शब्दों का प्रयोग दो-दो, तीन-तीन बार प्रयुक्त हुआ है। बहरहाल, पहले कुछ शब्दों के हिंदी पर्याय का चयन करते हैं :

bill	– विधेयक
inter alia	– अन्य बातों के साथ-साथ
recognition	– मान्यता, पहचान
vesting	– न्यस्तता, निहितता
vested	– न्यस्त, निहित
occupation	– व्यवसाय, अधिकार, आधिपत्य
dwelling	– निवासरत
residing	– स्थायी रूप से किसी जगह रहना, बसना
forest land	– वन भूमि, जंगल की जमीन; वन की जमीन, जंगल भूमि
provides	– व्यवस्था है, प्रदान करता है, देता है
determine the nature of evidence	– साक्ष्य की प्रकृति (या स्वरूप) का निर्धारण
generations	– वंशज या पूर्वज

उपर्युक्त शब्दावलियों के हिंदी पर्याय चयन में उन शब्दों को हटा दिया गया है जो संबंधित विषय के संदर्भ में सही अर्थ को अभिव्यक्त नहीं करते। मूल को एक से अधिक बार पढ़ते ही यह समझ में आ जाता है कि इसे सहज ही दो भागों में बाँटा जा सकता है : "The SCHEDULED TRIBE ..... could not be recorded' पहला भाग है तथा 'and for establishing ..... respect of forest land". इनमें से पहले हिस्से का अनुवाद करने में कोई कठिनाई नजर नहीं आ रही है। सिर्फ generation शब्द के लिए 'वंशज' या 'पूर्वज' अर्थ को ध्यान में रखते हुए for generations का अर्थ 'पीढ़ी दर पीढ़ी से' लिख देने से इसका अनुवाद लगभग तैयार हो जाता है। इस आधार पर पहले भाग का अनुवाद इस प्रकार होगा :

''अनुसूचित जाति (वन अधिकारियों को मान्यता) विधेयक, 2005 में अन्य बातों

के साथ-साथ, वन में निवासरत ऐसी अनुसूचित जनजातियाँ, जो पीढ़ी दर पीढ़ी से वन में रहती आ रही हैं परंतु उनका इस भूमि पर अधिकार एवं आधिपत्य अभिलिखित नहीं हो पाया है।''

अब वाक्य का दूसरा हिस्सा लेते हैं। इसका अनुवाद करने से पहले इसे पुनः एक बार पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसे भी सहज ही दो भागों में बाँटा जा सकता है :

1. and for establishing a framework for recording the forest rights so vested.
2. and determine the nature of evidence required for such recognition and vesting in respect of forest land.

अब यदि इन दोनों हिस्सों का हिंदी में अनुवाद किया जाए तो वह इस प्रकार होगा :

1. और ऐसे न्यस्त वन अधिकारों की मान्यता को अभिलिखित करने हेतु एक ढाँचे की स्थापना करना।
2. व इस प्रकार के वन भूमि से संबंधित मान्यता व न्यस्तता देने के लिए आवश्यक साक्ष्य के स्वरूप निर्धारण करने को मान्यता देना।

अब हम इन तीनों हिस्सों को जोड़ देते हैं तो एक ही लंबे वाक्य वाली मूल सामग्री का अनुवाद तैयार हो जाता है, जो इस प्रकार है :

हिंदी अनुवाद

''अनुसूचित जनजाति (वन अधिकारों को मान्यता) विधेयक, 2005 में अन्य बातों के साथ-साथ, वन में निवासरत ऐसी अनुसूचित जनजातियाँ, जो पीढ़ी दर पीढ़ी से वन में रहती आ रही हैं, किंतु उनका इस वन भूमि पर अधिकार एवं आधिपत्य अभिलिखित नहीं हो पाया है और ऐसे न्यस्त वन अधिकारों की मान्यता को अभिलिखित करने हेतु एक ढाँचे की स्थापना करने व इस प्रकार के वन भूमि से संबंधित मान्यता व न्यस्तता देने के लिए आवश्यक साक्ष्य के स्वरूप निर्धारण करने को भी मान्यता प्रदान की गई है।''

इस प्रकार हम लंबे वाक्य को तोड़कर उसका हिंदी अनुवाद तैयार कर सकते हैं। हमें इसके लिए थोड़ी सावधानी बरतने की जरूरत है, मूल को ठीक से समझने और उसके सटीक हिंदी पर्याय चुनने की जरूरत है। साथ में यह भी ध्यान रखा जाए कि केवल विधिक शब्द का हिंदी पर्याय ही विधि शब्दावली से ग्रहण किया जाए। साधारण रूप से प्रयुक्त शब्दों का हिंदी पर्याय अन्य समुचित शब्दावली से लिया जाए।

❑

फिरदोस खान
अनु. : फरहा फातिमा

प्यार ही ज़िंदगी

कॉलबेल बजी तो बजती चली गई। लिहाफ (कंबल) में दुबकी और नॉवल में गुम आयशा ने घबराकर नॉवल तकिए के नीचे सरका दिया। ''या अल्लाह कौन है इस वक्त! इतनी रात गए!!'' उसकी निगाहें दरवाज़े पर झूलते पर्दे के फूलों पर जम गई। एक तो तन्हा लड़की, वह भी हसीन और जवान! दूर-दूर तक न कोई हमदर्द, न गमकार!

बेल थी कि बजती चली जा रही थी। ''दरवाज़ा खोले या न खोले'' का ख्याल आयशा के दिमाग में बार-बार घूम रहा था। आखिर हिम्मत कर वह पलंग से कूदकर दरवाज़े तक आ गई। दरवाज़ा खोलते ही वह चौंक पड़ी – सामने अरब कल्चर की लेक्चरर मिसेज आसिफ खड़ी थीं। उनके पीछे एक नौजवान था – बेहद स्मार्ट, बेहद डीसेंट। नीली सफेद धारियों वाले नाइट सूट में। आँखों में नींद की खुमार और हाथों में बड़ा-सा टिफिन थामे वह बेहद थका हुआ लग रहा था।

''आधे घंटे से बेल रिंग कर रही हूँ। मगर जनाब लगता है, घोड़े बेचकर सो रही थी!...'' ''नहीं मैडम सोई नहीं थी। वह तो ये है कि... बात यह है कि इस ठंडक में नरम-गरम लिहाफ कौन छोड़े? है ना...?'' मैडम के खूबसूरत दाँत चमक उठे। ''जी आप लोग अंदर आइए...'' ''हाँ जी मुझे तो आना है वर्ना अपनी तो नसें जम जाएँगी। न स्वेटर न शॉल'' वह नौजवान मैडम को हटाता अंदर आ गया।

''आप लोग ठीक से बैठिए।'' आयशा बोली – ''देखो भई बैठने का वक्त तो है नहीं। मुझे अगर पता होता कि तुम इतनी बेमुरव्वत हो, तो कभी मोहब्बत से इन्वाइट न करती। निशि कितना याद कर रही थी तुम्हें। खैर, जाने दो तुम न आई मगर केक

और खाना तुम तक आ गया। अब जल्दी से बर्तन खाली कर दो। बेचारे काशिफ को भी परेशान होना पड़ा ठंडक में। बिस्तर से उठा कर लाई हूँ।''

''इसकी क्या जरूरत थी!'' आयशा इनकी मोहब्बत के आगे बिछी जा रही थी।

''फिर क्या तुम्हारे हिस्से का बासी मैं खाती क्या? अब बर्तन जल्दी खाली करो प्लीज़।''

''हाँ मिस जल्दी कीजिए मेरे भइया इनके इंतज़ार में तारे गिन रहे होंगे। लीजिए अल्लाह का नाम लेकर टिफिन खोलिए बड़ा स्वादिष्ट माल है। दिल खुश हो जाएगा।'' वह नौजवान बोला।

''ओए चुप कर शैतान।'' मैडम की आँखों में प्यार और स्नेह एक साथ तैर उठा।

टिफिन लिए आयशा किचन में आ गई। आज मैडम की इकलौती बेटी निशि का जन्मदिन था। मैडम ने काफी ज़ोर दिया था आने को। खुद नहीं, गुड़िया आई थी... इन्वाइट करने...। उसने गैस खोल कर दूध रखा। बर्तन खाली करके वह कॉफी बनाने लगी। ''अरे ये क्या?'' कॉफी देखकर मैडम चौंक उठी। ''ठंड इतनी तेज़ थी मैंने सोचा गरम-गरम कॉफी...''

''आपने सही किया मिस। लाइए, दीजिए। अल्लाह आपको खुश रखे, सलामत रखे। चाँद-सा दूल्हा दे।'' वह बड़ी-बूढ़ियों के अंदाज़ में बोल रहा था।

''सारा स्टॉफ आया था। बस, एक तुम्हारी कमी थी। तुम कहीं आती-जाती क्यों नहीं? उस रोज़ मिसेज समदानी शिकायत कर रही थी। क्या घर से परमिशन नहीं है। मगर सब हैं कहाँ, खाली तुम ही नज़र आ रही हो।'' उन्होंने कॉफी का घूँट भरते हुए चारों तरफ निगाहें दौड़ाई।

''वह बात यह कि मैं अकेली रहती हूँ...'' ''और तुम्हारे माँ-बाप?'' ''माँ-बाप हैं नहीं। छोटी थी तभी पापा मर गए थे और अम्मी चार साल हुए।'' उसकी आवाज़ भर आई। ''ओ सॉरी। और भाई-बहन?'' ...''बहन मैं ही हूँ। भाई है, वह दूसरे शहर में रहते हैं, बाल-बच्चों के संग। मेरी सर्विस इधर है।'' ...''रिश्तेदार होंगे?'' ...''कोई नहीं है, ट्रांसफर होकर आई हूँ।'' ''कोई बात नहीं बेटे, कोई बात नहीं।'' – मैडम का हाथ इसके कंधे पर आया। ''मैं हूँ न, मैं तुम्हारी अपनी बहन हूँ। बहन समझो या दोस्त या फिर भाभी। कोई प्रॉब्लम हो, घबराना मत मुझसे बोलना। हाँ, दिल में अपनापन और प्यार होना चाहिए गैर अपने हो जाते हैं।''

''अफकोर्स भाषण मंत्री अफकोर्स! चलें अब, वर्ना हमारे घर वाले हमारी तलाश में निकल पड़ेंगे।''

''चलती हूँ बाबा। काम सब समेट आई हूँ, चल कर सोना ही तो है।'' ...''सोना

ही है, तो बड़ी मामूली बात है। वह क्या कहते हैं कि क्या आपकी शादी हो चुकी है? अपन तो अभी हैं कुँवारे। नाम निकल गया कि लड़का आधी-आधी रात अपनी भाभी के साथ बाहर रहता है, तो कौन देगा लड़की।'' काशिफ के अंदाज़ पर मुस्कुराए बिना न रह सकी।

''अच्छा बाबा अच्छा चलती हूँ। खुदा हाफिज़। आयशा कल आ जाओ न निशि बहुत खुश हो जाएगी तुम्हें याद करते हुए सोई है।''

''वह बात ये है मैडम...''

''बहाने मत बनाओ। पता है कितना याद किया, कितना इंतज़ार किया मैंने।''

''सॉरी मैडम, मैं कल ज़रूर आऊँगी।''

''पर मिस'' वह रूके... ''ठीक है न आइए तो फिर... आगे न बोलिए मैं ज़रूर आऊँगी।''

मैडम को वायदा कर वह बेड पर आ लेटी। इतना प्यार, इतना अपनापन, इतना स्नेह। क्या रिश्ता था इसका इनसे? आँखें इस प्यार पर अपने आप छलक उठीं। वह वक्त याद आ गया, जब मैडम से पहली बार मिली थी। नरम-नरम नाजुक-सी मैडम! कॉलेज में लेक्चरशिप संभाले उन्हें काफी दिन हो गए थे। कॉलेज की हसीन-रंगीन जवान दुनिया का इस पर कोई असर न था। सबसे अलग-थलग वह अपनी मोटी-मोटी किताबों में गुम रहती। विद्यार्थियों की शरारतों को टाल जाती। साथी लेक्चरर्स द्वारा बढ़ाए दोस्ती के हाथों से उसे मतलब न था। हॉफ-टाइम में छुट्टी होनी थी शायद इसलिए मैडम अपनी तीन साल की बेटी निशि को लाई थी। सुर्ख सफेद गोल-मटोल गुड़िया। व्हाइट, बेहद सुंदर फ्रॉक में वह किसी बर्फीले देश की शहज़ादी लग रही थी। स्टॉफ के बीच वह खिलौना बन गई थी।

''मम्माँ मैं भी यहीं पढ़ूँगी।'' वह मैडम से बोली, ''अच्छा कौन-सी टीचर से पढ़ेगी, मेरी बिटिया'' निशि एक पल सबको देखती रही, फिर आयशा के पास आकर खड़ी हो गई – ''इनसे पढ़ूँगी'' ...बच्ची इतनी प्यारी-मनमोहक थी कि आयशा न चाहते हुए बोल पड़ी ''अरे तुम्हारी मम्माँ खुद इतनी अच्छी हैं इनसे नहीं पढ़ोगी।'' बच्ची ने एक नज़र माँ पर डाली और फिर आयशा को देखकर बोली, ''तुम ज़्यादा अच्छी हो, मम्मी कम अच्छी हैं।''

''चल पागल कहीं की।'' आयशा शरमा कर हँस दी। ''चलो भाई, हमारी बिटिया ने तुम्हारी चुप्पी तोड़ दी। वर्ना मैं समझती थी कि तुम्हें हँसना ही नहीं आता।''

इसके बाद निशि अक्सर कॉलेज में आ जाती। मासूम चंचल गुड़िया से उसकी अच्छी-खासी दोस्ती हो गई। ''आँटी मेरे घर चलो ना'', वह अक्सर कहती। ''तुम्हारे

घर क्या है जो चलूँ।'' ...''मेरी अम्मा है, डैडी है, मम्मा है, चाचा है, फूफीजान है, मगर अब वह यहाँ नहीं रहती'' ...''अब कहाँ रहती हैं?'' आयशा पूछती। ''वह अब फूफाजान के घर रहती हैं। फूफाजान उनके दूल्हा हैं...'' समझदारी के सारे खजाने वह प्यारी बच्ची अपनी आँटी पर लूटा देती।'' अच्छा तुम्हारा, तुम्हारा दूल्हा कौन है?'' ''मेरा?'' वह सोचती ''कोई भी नहीं। फूफी कहती हैं कि जब तुम बड़ी हो जाओगी तब दूल्हा तुम्हें ले जाएगा। मगर मैं नहीं जाऊँगी दूल्हे के घर...'' ''फिर कहाँ जाओगी?'' ''मैं तुम्हारे घर जाऊँगी।'' यह कहते हुए वह उससे चिपक जाती।

मासूमियत और इतनी रात गए यह स्नेह, अपनापन आयशा की आँखें नम हो गईं। उसने सिर तक लिहाफ खिंच लिया। दूसरे दिन रविवार था। काफी देर से बिस्तर छोड़ उसने नहा-धोकर फ्रिज़ खोला तो मैडम याद आ गई। आज उनके घर जाने का वायदा भी तो है। नाश्ता लेकर वह टी.वी. के आगे बैठ गई। उसने अपने आपको इस छोटे से फ्लैट में कैद कर रखा था। कॉलेज से घर, घर से कॉलेज – बस ये ही उसकी जिंदगी थी। न किसी से मिलना, न कहीं आना, न जाना – मगर मैडम का प्यार, उनकी बेटी का प्यार! जाना ही पड़ेगा। टी.वी. ऑफ कर वह उठ खड़ी हुई। पहले मासूम गुड़िया के लिए गिफ्ट लेना था। जल्दी-जल्दी वह तैयार होने लगी, ताला लगाकर वह सड़क पर आ गई।

''आइए-आइए'' आलीशन डिपॉर्टमेंटल शोरूम के सेल्समैन ने उसका स्वागत किया।

''कहिए क्या सेवा करूँ।'' ''देखिए मुझे बच्चों के बर्थ डे के लिए प्रेजेंट चाहिए।''

उसने चारों तरफ निगाहें दौड़ाई। गुलाबी सुनहरी काम वाली बेहद खूबसूरत फ्रॉक को देखकर आएशा की निगाहें उस पर जम-सी गईं।

''अरे बहन जी इसके साथ यह क्राउन है, बेल्ट, ब्रैसलेट और शूज़। यह ड्रेस जिसे देंगी वह याद करेगी आपको।'' ''ठीक है इसे पैक कर दें।'' वह पर्स खोलने लगी। ''और बहन जी ये है गुड़िया और ये इसकी गृहस्थी। कितनी प्यारी है। मार्केट से काफी कम दाम में दे दूँगा आपको।''

''ठीक है बाबा इसे भी पैक करो। बिल बना दो। मैं जरा जल्दी में हूँ।'' बड़ा-सा शॉपिंग बैग संभाले वह शॉपिंग कॉम्प्लेक्स की सीढ़ियाँ उतर रही थी कि किसी से टकराते-टकराते बची। चार्ली की मस्त-मस्त महक ने उसे अपनी गिरह में ले लिया। निगाहें उठा कर देखा तो वहाँ काशिफ खड़ा था। क्रीम सलवार-कुर्ते पर ब्राउन वासकोट, लंबा-चौड़ा बेहद स्मार्ट ''तो ये कहिए शॉपिंग के लिए फुरसत है और मेरे घर आने के लिए?'' रोशन की आँखें उसे सिर से पैर तक निहार रही थीं। शॉकिंग पंख सुनहरी पापीन वाले कॉटन के रूटे में बालों की दो चोटियाँ किए वह बेहद मासूम, बेहद नखरी दिख रही थी।

काशिफ के इस तरह देखने पर वह नर्वस-सी हो गई। ''ठीक है, मैं भाभी से शिकायत करूँगा।'' तेज-तेज कदम उठाता वह भीड़ में गुम हो गया।

टैक्सी से उतर कर आयशा ने कार्ड निकाल कर पता देखा। धीरे कदमों से आगे बढ़ने लगी। उसने निगाहें उठाकर दूर तक मकानों का जायजा लिया। मैडम स्टैंडर्ड दो मंजिल मकानों के एक लंबे घर में रहती थीं। आगे छोटा-सा गार्डन, साफ-सुथरी सड़कें। अजीब महका-महका दिल लुभाने वाला माहौल। नेम-प्लेट पढ़ती आयशा एक मकान के आगे रुक गई – ''मिस्टर आसिफ खान, मिस्टर काशिफ खान'' पढ़ते उसने बेल रिंग की। दरवाजा मैडम ने खोला – ''हाय आयशा तुम!'' खुशी से उनकी आँखें चमक उठीं और मारे खुशी के उसे गले से लगा लिया। ''कितनी स्वीट, कितनी प्यारी हो।'' सुनहरे काम वाला ऑरेंज सूट और उस पर नगों का जगमगाता सेट, हल्के-हल्के मेकअप में वह नजर लग जाने की हद तक प्यारी लग रही थी। उन्होंने उसकी पिशानी चूम ली। ''यकीन करो आयशा मुझे उम्मीद न थी। सच, कितना दिल खुश किया तुमने। अरे! मैं भी कितनी पागल हूँ, सारी बातें यहीं कर रही हूँ चलो अंदर चलो।'' वह उसे लिए अंदर आ गई।

मैडम स्टैंडर्ड मकान में रहती थी। तख्त पर एक अधेड़ उम्र की साफ-सुथरी महिला बैठी थी, जिनके बाल एक लड़की सँवार रही थी। ''आयशा ये मेरी सास हैं, ये ननद नाज़ीश। कल आई थी। और ये अम्मा, ये आयशा है निशि याद करती है।'' ...''ये हैं ही इस काबिल कि इन्हें याद किया जाए।'' लड़की मुस्कुराते हुए उठ खड़ी हुई। ''आओ बेटा, मेरे पास आओ।'' अम्मा पायदान सरका कर उसके लिए जगह बनाने लगी।

''अस्सलामु वालेकुम अम्मा।'' आयशा उनके पास जा बैठी। ''जीती रहो, खुश रहो, चाँद जैसी हो, अल्लाह सूरज जैसा दूल्हा दे।'' ''दूल्हा?'' आयशा का मन चहक उठा। बीता हुआ बहुत कुछ याद आने लगा। उसने सिर झटका दिया। ''आज संडे है, फिर कल का फैला हुआ समेटने में लगी थी।'' मैडम उसके आगे-पीछे जा रही थी। ''अम्मा काशिफ कहाँ गया?'' क्या मालूम दूल्हन बिटिया सवेरे से वह हवाई घोड़े की तरह गायब है। न खाने का होश है, न पीने का। आसिफ जाग रहा होगा। इसी से कुछ मँगा लो।''

''क्या मँगाना है भई।'' काशिफ बोतल के जिन की तरह दरवाजे में आ खड़ा हुआ। ''तुम को नहीं मालूम घर पर मेहमान आए हैं।'' ...''अजी कहिए क्या लाएँ? बाजार में घूम रहे जब से आप। शिकायत की धमकी दी तो चले आए। वैसे कल का बचा सामान तो होगा ही।''

''अरे क्या बासी खाना खिलाऊँगी इसे''

''मैडम मेरे लिए परेशान न हों। मैं खा-पीकर आई हूँ।'' ...''अपने घर से भूखा कोई नहीं चलता, समझी।'' ...''लाइए पैसे और लिस्ट।'' ...काशिफ बोला। ''वाह! मेहमान तुम बुलाकर लाए और पैसे मैं दूँ?'' ...''अच्छा लाइए लिस्ट दीजिए।'' ''अपने मन से करो ताकि आदत पड़े वर्ना लिस्ट मांग-मांग कर बीवी से कहाँ जाओगे।'' ...''ठीक है'' वह चला गया।

''बड़ा प्यारा इंसान है।'' मैडम उसकी तरफ मुड़ी। ''इतना बड़ा हो गया लेकिन बचपना अभी तक नहीं गया। घर के बगैर कहीं नहीं रह सकता। पी.एम.टी. के बाद गोरखपुर पढ़ने गया था, डॉक्टरी। पता नहीं कैसे वहाँ कुछ दिन रहा, फिर आकर हमसे लिपट कर बोला, ''मेरी प्यारी भाभी अपने बच्चे खिलवा लो, झाड़ू-बर्तन करवा लो, मगर घर से बाहर रहने की सजा तो न दो। तुम लोगों के बिना मैं मर जाऊँगा।'' अम्मा बहुत नाराज थीं, मगर मैंने एम.बी.बी.एस. पढ़वा दिया।

थोड़ी देर में काशिफ आ गया। एक हाथ में बैग, दूसरे में निशि के लिए। ''लो नाजिश ये सामान'' बैग उसने नाजिश को दे दिया। ''और भाभी ये लड़की कोड़े पर पड़ी थी उठा लाया।'' मैडम ने निशि को जल्दी से ले लिया। जब तुम्हारे बच्चे होंगे तब पूछूँगी कौन-से कोड़े से लाए हो उठाकर। निशि तुम थी कहाँ...?''

''मम्मा, वह रानी के संग खेल रही थी। चाचा वहीं से उठा लाए।'' ...''हाँ बेटा आँटी आई हैं, तुम्हें याद कर रही हैं।''

''अरे आँटी तुम!'' निशि रोना भूलकर उससे लिपट गई। ''चलो नाजिश हम लोग किचन संभालें'', काशिफ की गरम निगाहें आयशा के दिल में हलचल मचा रही थी। ''आँटी तुम कल क्यों नहीं आई थीं? तुम्हारी निशि तुम्हें बहुत याद कर रही थी।'' ''अच्छा'', ''हाँ आँटी, बहुत सारे मेहमान आए थे, मेरे लिए गिफ्ट लाए थे। देखोगी!''

''आँटी जरूर देखेगी, पर मेरी बिटिया पहले मेरा गिफ्ट तो देख लो।'' आयशा ने निशि को फ्रॉक और पूरा सेट पहनाया। गोल-मटोल खूबसूरत लड़की फूलों के किसी देश की राजकुमारी लग रही थी।

''और ये तुम्हारी गुड़िया और ये रहे खिलौने।''

''अरे आयशा ये सब क्या कर डाला तुमने यहाँ।'' मैडम हैरान थी।

''कुछ भी नहीं हमारी निशि को गिफ्ट पसंद आया।'', ''यस आँटी थैंक्यू। मैं रानी को दिखाकर आती हूँ।'' वह खिलौने समेट चली गई। तभी नाजिश-काशिफ आ गए नाश्ते की ट्रे उठाए। ''तुम रहती कहाँ हो?'' ''जी यहीं।'' ''घर में कौन-कौन है?'' अम्मा ने ट्रे उसके आगे रखते हुए कहा। ''फिलहाल तो अकेली हूँ। माँ-बाप जिंदा

नहीं। भाई बाल-बच्चों वाले हैं, दूसरे शहर में रहते हैं।'' ''आते तो होंगे खैरियत के लिए।'' आयशा चुप रही। ''आओ नाजिश बैठो। यह मेरी बेटी है।'' अम्मा बता रही थी। ''सबसे प्यारी, सबसे छोटी। पिछले साल शादी की है इसकी, इसी शहर में।'' ...''हाँ यहीं की है। वैसे तो इसे रिश्ते बहुत आए, बड़े-बड़े घरों से। मगर मैंने खुलुस खुशमिजाज और इंसानियत देखी, नीयत देखी। अल्लाह का शुक्र है, जैसा चाहती थी वैसा ही पाया। हालाँकि ज्यादा पैसे वाले नहीं हैं, मगर निभाने वाले हैं। पैसे का क्या? हाथ का मैल है खाली!'' अम्मा बोले जा रही थी। ''मैंने पैसा नहीं इंसानियत देखी।'' अम्मा के अल्फाज के साथ कुछ और याद आ गया उसे। ''मैं बेटी की शादी पैसे वाले घर में करूँगी, पैसे वाले बड़े लोगों से रिश्तेदारी करने से शान बढ़ती है।''

''काश अम्मी तुमने भी पैसे से ज्यादा इंसानियत देखी होती तो आज तेरी बेटी वीरान न होती, तन्हा न होती।'' उसके दो आँसू निकल गए। ''तुम रो रही हो बेटी?'' अम्मा चौंक पड़ी। ''आपको देखकर अपनी अम्मा याद आ गई।'' वह सिसक पड़ी। ''अरे पगली मैं भी तो तेरी माँ ही हूँ। रो मत चंदा।'' उन्होंने उसके आँसू अपने महकते दुपट्टे में हजम कर लिए। ''मैं तेरी माँ हूँ। आज से जब दिल घबराए चली आया करो, अच्छा।'' उन्होंने उसे सीने से लगा लिया। वह भी चिपक गई। अम्मा इसे अपने हाथ से चीजें खिला रही थी।

इस प्यारे महकते गुलशन से घर आकर आज उसे पहली बार अपनी तन्हाई-वीरानी का अहसास हुआ था। निगाहों में मैडम की हँसी और महकती-चहकती गृहस्थी घूम रही थी। न इनके घर महँगे कालीन थे, न रेशमी पर्दे, न कीमती फर्नीचर, न ही नौकरों और गाड़ियों की कतार। मगर फिर भी अजब-सी खुशी, अजब-सा सुकून था वहाँ। ''मैंने पैसा नहीं खुलुस देखा है।'' पास ही अम्मा की सरगोशी भरी – ''मेरी एक ही बेटी है। मुझे पैसे वाला घर चाहिए। बड़े लोगों में शादी करूँगी इसकी।'' तसव्वूर में बड़े भइया की आवाज अम्मी के साथ घूम गई। ''झूठी शान और बड़ाई के पीछे मत दौड़ें। अम्मी जरूरी नहीं बड़े लोगों के दिल भी बड़े हों।'' ...''आप सच कहते हैं भइया, बड़े लोगों के दिल बड़े होते न तो...'' वह सिसक पड़ी। आँसू छलक उठे। बेदम-सी वह गार्डन में आ बैठी। बीता वक्त उसे याद आ गया। चार भाइयों के बीच अकेली बहन! बड़ी नाजों से पली थी वह। बाप की नूरे-नजर, माँ के दिल का टुकड़ा, भाभियों की लाडली, बेइंतहाँ चाहतों की झूलती कब पोस्ट ग्रेजुएट हुई उसे पता न चला। तीन भाई अपने घर-बार के थे। वह यूनिवर्सिटी में मग्न थी, तब पहला रिश्ता आया। मिडिल क्लास के लोग थे। लड़का पढ़ा-लिखा किसी कंपनी में एग्ज़ीक्यूटिव था। अम्मी ने बड़ी बेदर्दी से यह कहकर रिश्ता ठुकरा दिया कि ''हूँ, न शक्ल देखते हैं, न स्टैंडर्ड। चले

आते हैं मेरी रानी का रिश्ता लेकर। अपनी रानी की शादी तो मैं किसी राजकुमार से करूँगी।''

''कौन राजकुमार जो नाली साफ करने आता है।'' छोटा भाई मुस्कुराता तो अम्मी जल जाती। ''हट बदतमीज। मेरी बिटिया के लिए तो परियों के देश का राजकुमार आएगा।'' ...''चलो सही है इसी बहाने हम लोग भी परियों के देश हो आएँगे वलीमा खाने।'' छोटे भइया की बात पर आयशा खिलखिला पड़ी। वक्त गुजरता रहा। रिश्ते भी आते-जाते रहे। उस दिन अम्मी आँगन में बैठी थी। ''आज बॉम्बे रेस्टोरेंट वालियाँ आई थीं मेरे घर।'' ''क्या चाय पीने?'' छोटा भइया बोला। ''हाँ चाय भी पी। बड़ी तारीफ कर रही थी चाय की, घर की सजावट की।'' अम्मी खुली पड़ी रही थी। ''अए आयशा अब यूनिवर्सिटी जाना बंद कर दे, अब तेरी नौकरी करने वाली...'' मंझली भाभी को कहने पर अम्मी बिगड़ गई।

''चल तेरे मुँह में खाक। नौकरी क्यों करे मेरी बेटी। वह तो मालकिन बनेगी। बॉम्बे रेस्टोरेंट की।'' ...''क्या?'' ...छोटा भइया चौंक पड़ा। ''कब खरीद रहे हैं आयशा होटल? इतना पैसा कहाँ से आ गया तेरे पास।''

''अरे पागल खरीद नहीं रही है। बॉम्बे वालों ने आयशा को माँगा है अपने बेटे के लिए।'' ...''वाह तब तो मजे आ गए।'' तीनों भाई चहक उठे, मगर बड़े भइया खामोश थे। ''तेरा क्या ख्याल है अरशद।'' अम्मी उनसे बोली, ''मेरा तो यह ख्याल है अम्मी कि शादी-ब्याह अपने स्टैंडर्ड में, अपनी हैसियत के लोगों में ठीक रहता है। आप सोचिए वे लोग करोड़ों में खेलते हैं, गाड़ियाँ-नौकर सब कुछ है। आज कर्ज लेकर शादी कर भी दें, मगर कल इनके यहाँ आने-जाने, इनकी आव-भगत कहाँ से होगी? इनके नौकर भी गाड़ियों में घूमते हैं। मैं ठहरा बाल-बच्चों वाला छोटा आदमी। मेरी समझ में नहीं आता ये रिश्ता।'' ...''उनकी कोई डिमांड नहीं।'' ...''बाद में हो जाती है सब।''

''न हो तो भड़का देना। जब बात करेगा उल्टी करेगा। मैं नहीं छोड़ने वाली यह रिश्ता।''

''हाँ, अम्मी आप न छोड़ें ये। भइया पैदा ही उल्टे हुए होंगे। वाह मुफ्त में बढ़िया चाय-डिनर-लंच।'' छोटे भइया की बात अम्मी को खुश कर गई। ''तुमसे ज्यादा इस छोटे में अक्ल है।'' ...''लड़की ठीक है, देख ली उन्होंने।'' बड़े भइया अब भी फिक्रमंद थे। ''हाँ-हाँ लीपापोती करके नहीं दिखाई। जिस वक्त वे लोग आए तब नहाकर निकली थी, मेरी बच्ची।'' अम्मी जल गई थी। ''माली हालात बता दी आपने?''

''हाँ बता दी थी।'' ''भइया हम फकीर, सारा खानदान फकीर, सात पीढ़ियाँ फकीर?

लोग बहनों का रिश्ता अच्छे घरों में तय करते हैं। आप हैं कि जले जा रहे हैं।''

आयशा की बात पक्की कर अम्मा ने छोटे भइया की भी मंगनी कर दी। खयालात की बुनियाद पर हालात बदल रहे थे। अम्मी उसका दहेज बना रही थी। बेहद शानदार, बेहद कीमती। शायद ही कोई चीज ऐसी बची हो जो न दी हो। उस रोज बड़े भइया आए थे। दस हजार का चेक लेकर। बस अपनी इतनी हैसियत है। अम्मी उन्हें दहेज दिखा रही थी। ''देखो कोई कमी रह गई हो तो बताओ।'' भइया ने यहाँ से वहाँ तक दहेज को देखा और फिर ठंडी साँस लेकर वे बोले, ''अम्मी ये लाखों का दहेज अगर हजार की हैसियत वाले पति के घर जाता तो मेरी बहन की कद्र करता, उसकी निगाह में आता सब दहेज। मगर ये लाखों का दहेज करोड़पति के घर जा रहा है। अल्लाह नसीब बुलंद करे मेरी बहन का।''

मंजा, निकाह, रूखसत जैसी आँसू-भरी रस्मों से निपट कर वह पिया के घर आ गई थी। डाई किए हुए बालों और मुँह को मेकअप कर इंग्लिश बोलती सास, दो देवर, आधी इंडियन आधी वेस्टर्न ननद और जाम पर जाम चढ़ाते ससुर साहब और हब्शी जैसे इसके शौहर।

''कोई बात नहीं चार पैसे होते हैं तो इंसान अपनी कद्र, अपने काम भूल जाता है। मैं लाऊँगी सबको राह पर प्यार से, मोहब्बत से।'' सिर के घूंघट से उसने सोचा। मगर उसे पहला झटका तब लगा जब शादी के चौथे रोज फजर (प्रातःकाल) के वक्त बिस्तर से उठने को हुई। ''अए किधर जा रही है।'' उसका शौहर बोला। ''जी, जी, वह सुबह हो गई। नमाज पढ़ूँगी। आप नहीं पढ़ते?'' ''अरे डार्लिंग अपनी तो अभी आधी रात है। पढ़ता हूँ मैं भी नमाज, मगर ईद पर। वैसे ईद पर भी पढ़ लेता हूँ हमारे हाथ कुर्बानी भी होती है। गोश्त कोई खाता नहीं यहाँ, मगर दुनिया के मारे करना पड़ता है। लोग कहेंगे कि... या अल्लाह कुर्बानी जैसे नेक काम में धोखा।'' उसने पढ़ा था वहाँ तुम्हारा खून गोश्त नहीं सिर्फ तखवा पहुँचता है।

गुजरते वक्त से उसे यह अहसास हो गया था कि दौलत के नशे में चोर, लालची और जाहिल दिमागों में आलसीपन है। कहाँ घर में वह अम्मी के साथ फजर में उठती और नमाज के बाद काम शुरू करती। और यहाँ दिन के 10 बजे सबका सवेरा होता। अजीब तरह का महौल था! अल्लाह का नाम न रसूल का। कोई शेव बनाते हुए धुनों पर सीटियाँ बजा रहा है। सास साहिबा बड़े इत्मीनान से कभी नाखून तो कभी बालों को रंग रही है। देवर-ननद आपस में ढेरों इंग्लिश गालियों के साथ बात कर रहे हैं। शौहर (पति) भी अब देर रात घर आने लगे। पूछने पर बड़ी बेशर्मी से किसी गर्लफ्रेंड का नाम लेते।

''मगर मुझमें क्या कमी है? जवान नहीं हूँ, पढ़ी-लिखी स्मॉर्ट नहीं हूँ?'' वह उलझ पड़ी, ''एक जगह बँधे जानवर घबरा जाता है, मैं तो इंसान हूँ।'' वह बेशर्मी से हँस देता। उस रोज वह मायके जाने को तैयार थी। अम्मी लेने आई थी। मिठाई और फल के टोकरे साथ लाई। भाई अपनी दुनिया में मग्न थे। बहन को उन्होंने वायदा नहीं, अलविदा किया था।

''समधिन मैं आयशा को ले जाऊँ?'' गरीब अम्मी, मेरी अमीर मम्मी के आगे बिछी जा रही थीं। ''ले जाइए। एक बात बोलनी है आपसे।'' ''कहिए।'' ''वह यह है कि मेरा मतलब दहेज जो आपकी हैसियत थी दिया। हम कुछ न बोले। मगर अब ऐसा है कि यह एक स्टैंडर्ड फैमिली से बिलांग करती हैं। इसलिए टैक्सी में जाना अच्छा नहीं लगता।''

''नहीं समधिन हम चले जाएँगे।'' ...''इस बार तो चली जाइए मगर अगली बार जब बेटी को भेजिएगा तो कोई गाड़ी में भेजिएगा।''

''क्या मतलब?''

''मतलब यह कि अपनी बेटी को एक गाड़ी दे दीजिए।''

अम्मी का सिर चकरा गया। लाखों का दहेज इनकी निगाहों में न आया। कितना कर्ज लेकर दहेज जुटाया। मकान तक गिरवी रखा, शादी के लिए। अब गाड़ी की मांग। गाड़ी न मिलने पर ससुराल वालों के मिजाज बदल गए। बाहर मॉर्डन नजर आने वाली फैमिली एक रिवायती ससुराल बन गई। धीरे-धीरे भइया का कहना सच होता चला गया। सास उस पर जुल्म ढाती, देवर-ननद मजाक उड़ाते और उसका पति कॉल गर्ल्स के साथ शाम बिताता।

''मॉडर्न फैमिली का ये कौन-सा फैशिनेबल स्टाइल है।'' वह घबराकर सोचती। मुस्कुराते लब अब मुस्कुराना भूल गए। निखरा-निखरा रूप गम की झोली में छुपने लगा। अम्मी मजबूर थी। इस हालत पर परेशान थी।

उस रोज उसका पति आया था जल्दी और बोला – ''हाय आयशा वन गुड्स न्यूज़ फॉर यू।'' उसने आयशा को बाजुओं में समेट लिया। ''क्या मगर'' ...वह हंस दी। ''मैं एक गेस्ट हाउस ले रहा हूँ तुम्हारे नाम से...'' ''अच्छा'', मासूम लड़की जरा से स्नेह से खिल पड़ी। ''मगर एक प्रॉब्लम है यार! इसे तुम ही साल्व कर सकती हो।'' ''मगर कैसे?'' ''वह 25 लाख मांग रहा है और मैं बीस दे रहा हूँ। लास्ट टाइम में लेना है, 5 लाख का बंदोबस्त कर लो, तुम कहीं से।''

''पाँच लाख?'' उसने ख्वाब में भी इतने नोट न देखे थे। वह घबराकर बोली, ''मैं कहाँ से लाऊँगी?'' ...''अरे चार-चार भाई हैं। ले लेना किसी से।'' न जाने कहाँ

से सास आ गई। ''मगर मम्मी, वे लोग खुद इस वक्त...''

''न इस वक्त, न उस वक्त। बहाने मत बना, समझी।'' जा बेटा, इसे छोड़ आ मायके। न जाने कौन से भीखमंगों के यहाँ फँस गए हैं हम भी।'' आयशा रोती-तड़पती रही, मगर पति पर असर तक न हुआ इसका। छह महीने बाद जब अम्मी ससुराल आई तो यह कहते हुए धक्के हाथ लगे कि ''अपनी बेटी को अपने घर रखिए।''

फिर उन जालिमों ने बड़ी बेदर्दी से रिश्ता खत्म कर लिया था। यह सदमा माँ से बर्दाश्त न हुआ। साल-भर के अंदर वह गुजर गई। भाइयों को अपने से फुर्सत न थी। जिस भावज के घर जाती, वह उससे अपना पीछा छुड़ाती। वह सिसक उठी। न कोई हमदर्द, न कोई गम दूर करने वाला। मजबूरी उसे जॉब तक ले गई। वक्त बड़े से बड़े जख्मों को भर देता है। सब कुछ धुँधला-सा होकर भी चमक रहा था। साथी टीचर्स और चंचल स्टूडेंट्स भी उसकी संजीदगी को उतार न पाए थे। भाइयों की लापरवाही और माँ की जुदाई, ससुराल की तानाशाही उसे हर समय सताया करती। उन्हीं दिनों उसने 'वांटेड कॉलम' में एक लेक्चरर की वेकेंसी पढ़ी। वहाँ नियुक्ति होने के बाद उसने शहर को छोड़ दिया हमेशा के लिए। भाइयों से मिलने गई थी। रोकना तो दूर, किसी ने एक खत लिखने को भी न कहा। नया शहर, नए लोग। दिल बजाय बहलाने के मचलता चला गया।

पेड़ों के परिंदे लौटकर आने लगे थे। उनकी आवाज पर वह चौंक पड़ी। खयालात तितर-बितर हो गए। धीरे-धीरे कदमों से वह कमरे में आ गई। वक्त गुजर गया। आयशा का जब दिल घबराता तो चली जाती उस महकती दुनिया में, जहाँ प्यार था, मोहब्बत, खुलुस और खुशियाँ थी। वहाँ जाकर उसे अपनी तन्हाई का अहसास मिट जाता।

''आँटी तुम घर न जाया करो।'' निशि उसकी गोद में आ दुबकी। ''तुम्हारी मम्माँ भगा देंगी तो?'' ...''मैं खुद मम्मा को भगा दूँगी।'' ...''अच्छा मैं फिर जा रही हूँ।'' – मैडम उसे धमकी देती इस पर निशि बोलती – ''न जाओ आँटी, मम्माँ और मैं भी आपके संग चलेंगे।''

''और मैं भी तो...'' काशिफ जाने कहाँ से आ टपका। निशि की मासूम बातें, अम्मा का स्नेह, मैडम की मोहब्बत और काशिफ की शेखी उसे हरदम बहलाया करती। काश यही अपनापन, यही मोहब्बत उसके घर में भी होती – वह सोचती। इसी रंगीन तमन्नाओं में बेखौफ दिन गुजरते जा रहे थे। एक दिन दिल ज्यादा घबराया तो वह मैडम के घर चल दी। आज पहली बार उसने घर का माहौल खिंचा-खिंचा देखा था। अम्मा एक तरफ गुमसुम पड़ी थी। तनतनाया काशिफ एक तरफ खड़ा था और मैडम खामोश बैठी थी।

''क्या हुआ मैडम?'' वह उनके पास आ बैठी। ''होगा क्या, ये काशिफ है बदतमीज।'' ''मगर हुआ क्या?'' ...''सच कहते हैं ज्यादा प्यार इंसान को बिगाड़ देता है। अब ये देखो'' मैडम ने एक फोटो उसके आगे बढ़ाई। ''मैं कहती हूँ क्या कमी है इसमें।'' ...''मैं कब कह रहा हूँ कमी है।'' ''फिर?''

''फिर क्या, मुझे पसंद नहीं है।'' ...''कोई वजह है, कोई और पसंद है क्या?'' ''आखिर, आप लोग मेरी शादी के लिए इतने परेशान क्यों हैं?'' ''इसलिए कि अम्मा शादी के बाद हज को जाना चाहती हैं।'' ...''लड़की की शादी के बाद हज सुना था। मैं तो लड़का हूँ। फिर आयशा को अम्मा ने लड़की बनाया है। पहले इसकी करें।'' ...''बात मत टालो, आयशा की भी होगी। मगर पहले तुम्हारी।'' ...''अब पहले और बाद में क्या है? हम दोनों की शादी साथ ही कर देना। ''क्या मतलब?'' ...''मतलब यह कि आई वांट मैरी विद आयशा।'' ''व्हॉट?'' आयशा की आवाज लड़खड़ा गई। ''क्या कह रहे हैं आप?'' ''ठीक ही कह रहा है।'' मैडम ऐसे बोली जैसा कोई नेता ...''अब चुप क्यों हो। कुछ तो बोलो...'' ...''नो मैडम, नो।'' ''क्यों? क्या कमी है मेरे काशिफ में? स्मार्ट नहीं है, रोजगार नहीं है, वेल एडुकेटेड नहीं है। सच आयशा, मेरा सारा घर तुम्हें कितना प्यार करता है। तुम क्या समझोगी, तुम रहती हो तो कितना अच्छा लगता है। तुम चली जाती हो तो हम सब तुम्हारी बातें करते हैं। बताओ किस चीज की कमी है यहाँ?'' ''कमी'' वह जख्मी दिल की तमन्ना अल्फाजों में लेकर सामने आई तो बजाय खुश होने के वह उदास हो गई।

''कमी आप लोगों में नहीं, मेरे में है मैडम। मैं इस काबिल नहीं कि काशिफ जैसे स्मार्ट कुँवारे की दुल्हन बन सकूँ।'' ...''पागल कहीं की। क्या कमी है, बोल।'' आयशा चुप रही। ''बोलो ना आयशा।'' आयशा ने निगाहें उठाकर काशिफ को देखा, फिर बोली, ''मैं कुँवारी नहीं तलाकशुदा हूँ।'' ''क्या?'' ''यही हकीकत है मैडम'' ...''मगर ये सब हुआ कैसे?'' उन्होंने उसके कंधे पर हाथ रख दिया। इतना अपनापन, इतना प्यार खोई-खोई वह सब बता बैठी – माँ की जुदाई, भाइयों की लापरवाही, भावजों की नफसा-नफसी और ससुराल का लालच। पूरी दास्तान सुनकर काशिफ और मैडम की आँखों में आँसू भर गए। ''आयशा''। बड़े प्यार से पुकारा था काशिफ ने ''भूल जाओ, जो सब हुआ वह ख्वाब था।'' उसने बेझिझक होकर काशिफ की ओर देखा। काशिफ के होठों पर एक पाकीज़ा मुस्कुराहट तैर गई।

''हाँ, आयशा मैं समेट लूँगा तुम्हारे गम। इन उदास होंठों को मैं हँसना सिखाऊँगा। आयशा तुम जो हो, जैसी हो मेरी हो। मैं तुम्हें इतना प्यार दूँगा, इतना प्यार दूँगा कि सब भूल जाओगी तुम। सब वह आँसू-भरे दिन, वह आहें भरी रातें। क्यों भाभी...?''

''अब भाभी क्या बोले, वह क्या कहते हैं मियाँ-बीवी राजी तो क्या करेगा काजी।'' हँसती हुई मैडम उठ खड़ी हुई। एक बार फिर उसके आँगन में खुशियाँ उतरने लगीं और हर दुःख-दर्द दूर हो गया। उसके स्टूडेंट्स और साथी टीचर्स की खुशियों का ठिकाना न था। सब बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रहे थे। बकायदा दहेज बनाया, सबने। मिसेज समदानी ने तो बारात पर फूल बरसाने के लिए फ्लाइंग क्लब की सेवा ले ली थी। खुशी के इस मौके पर भाइयों को भी बुलाया गया।

जिंदगी इतनी हसीन, इतनी खूबसूरत हो जाएगी, उसने सोचा भी न था। शादी के बाद क्या कुछ न दिया उसे मैडम की फैमिली ने! आईना देखती तो हैरान हो जाती। आजकल काशिफ अपनी फैक्ट्री लगा रहा था। काफी थका-बोझिल दिख रहा था। वह उस रोज अम्माँ के कमरे के आगे से गुजरी तो अपना नाम सुनकर चौंक पड़ी।

''बेटे, आयशा गैर नहीं तुम्हारी बीवी है। तुम उससे क्यों नहीं ले लेते पैसे। वह अपने अकाउंट में रखती है।''

''ठीक है अम्माँ, मगर अब काम पूरा हो चुका है सिर्फ वॉयरिंग बाकी है। 20-25 हजार का खर्च है। देखते हैं कहीं से कर्ज का इंतजाम करूँगा।'' काशिफ बोला। ''अरे तो आयशा से कर्ज ले ले। बाहर से लेगा तो ब्याज देना पड़ेगा। वह नाजायज है।'' ...''आप सही कहती हैं। मगर आयशा को देना मेरा फर्ज है, लेना नहीं। फिर मुझमें और उसके पहले शौहर में क्या फर्क रह जाएगा।'' वह खड़ा हुआ। आयशा भी हट गई। ''तो ये फिक्र थी जनाब को।'' वह मुस्कुरा दी। आयशा ने मुस्कुराते हुए पचास हजार का चेक बनाया और आँखें बंद किए हुए काशिफ के पास आ बैठी। थका-थका सा काशिफ उसकी जरा-सी तकलीफ पर बेकरार हो जाने वाला नौजवान। उसे बेइंतहाँ प्यार आ रहा था उस पर। अपने पास उसे पाकर काशिफ बोला, ''आयशा।'' आयशा कुछ न बोली। ''आयशा चुप क्यूँ हो?'' वह अब भी चुप थी। ''नाराज हो मुझसे।'' ...''हाँ बहुत।'' ''क्यों?'' घबराकर काशिफ ने आँखें खोल दी। ''मगर क्यों?'' ...''जब अपना समझा न था तो शादी क्यों की।'' ...''क्या मतलब?'' ...''मतलब यह कि पैसे घर में हैं और वॉयरिंग के लिए कर्ज लिया जा रहा है। यह गैरियत नहीं तो और क्या है।'' यह कहते हुए उसने चेक काशिफ को पकड़ा दिया। ''आयशा'' काशिफ ने उसे सीने से लगा लिया। ''अब ऐसी गैरियत बरतेंगे तो चली जाऊँगी, उस फ्लैट में तन्हाई में घुट-घुट कर मरने के लिए।'' उसकी आँखें नम होने लगी।

जब दिल में कहने के लिए बहुत कुछ न हो तो जुबान साथ छोड़ देती है। काशिफ ने धीरे से उसका चेहरा उठाया और उसकी भीनी आँखों को चूम लिया।

❑

गुरुनाम सिंह 'तीर'
अनु. पी.के. हरिवंश

समर्पण

पुस्तक मैंने लिख ली थी। उसका नामकरण भी हो गया था। अब मेरी सबसे बड़ी उलझन यह थी कि इसे किसके कर-कमलों में समर्पित किया जाए। एक बुद्धिमान व्यक्ति ने मुझे सलाह दी कि मैं यह पुस्तक उस व्यक्ति को समर्पित करूँ जिसके साथ मुझे सबसे अधिक प्यार है।

यदि किसी व्यक्ति से यह पूछा जाए कि तुम इस संसार में सबसे अधिक किससे प्यार करते हो तो इस प्रश्न का उत्तर देते समय वह एक बार तो अवश्य ही अपनी सारी दुनिया पर दृष्टिपात करेगा। यही अवस्था मेरी थी। मैंने सोचना शुरू किया। विचार आया कि 'प्रेम' परमात्मा के बाद दूसरी शक्ति है। मैंने लेखनी उठाई और कागज पर लिख लिया – 'अपने प्रेम को'। पर यह क्या बात बनी? कौन से प्रेम को? प्रेम करने वाले इस रहस्यमय शब्द के क्या अर्थ निकालेंगे? समाप्त हुए प्रेम को? चल रहे प्रेम को अथवा होने वाले प्रेम को? संसार में प्रेम एक ऋतु का रूप धारण कर चुका है। इसके साथ ही हमने प्रेम में कौन-सा बड़ा तीर मारा है। हमने अपने प्रेम के लिए बलिदान नहीं किया। न ही प्रेम की उलझनों का हमने रसास्वादन किया। न किसी की प्रतीक्षा की और न ही किसी के लिए जान खतरे में डाली। हमारे प्रेम को प्रेम कहना ही मूर्खता है। अतः छोड़ो इस बात को, कोई और बात सोचो।

'सफल प्रेमियों को', जिन्हें प्रेम विवाह का सौभाग्य प्राप्त हुआ होगा? विचार अच्छा है परंतु यह प्रेम-विवाह वाले क्या महत्व रखते हैं? किसी ने तो ठीक ही कहा है कि किसी को किसी की आँखें अच्छी लगती हैं, किसी को किसी का रंग पसंद आ गया, कोई किसी के सुंदर लंबे बालों पर ही न्योछावर हो बैठा, किसी को किसी के सफेद दाँत

ही अपना बना बैठे, किसी को किसी की पतली कमर ही अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हो गई। कभी-कभी किसी की सुंदर-सुरीली आवाज ने किसी को अपना बना लिया और कोई यौवन के समक्ष आत्म-समर्पण कर प्रेमी होने का गौरव अनुभव करने लगा। ऐसा भी हुआ कि किसी सुंदरी के सुंदर वस्त्रों ने किसी के हृदय का कत्ल कर दिया और कभी ऐसा हुआ कि किसी के अंदाज ने ही किसी के हृदय पर अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया। मतलब यह कि पसंद तो एक चीज आती है परंतु जिम्मेदारी सारे माल की उठानी पड़ती है। छोड़ो जी इन प्रेम-विवाह वालों को।

फिर सोचा, अपनी पत्नी अथवा बच्चों के नाम ही इसका समर्पण कर दिया जाए। परंतु दूसरे ही क्षण यह विचार आया कि इन लोगों ने पुस्तक लिखे जाने के रास्ते में अनगिनत रुकावटें पैदा की हैं। ये इस किताब के समर्पण के अधिकारी कैसे हो सकते हैं? साथ ही पुस्तक अपने घर वालों को ही भेंट कर देना परिवार-पोषण ही कहला सकता है। इसके अतिरिक्त यह ढंग अब पुराना हो गया है। इसके पश्चात मैंने अपने मित्रों के संसार में दृष्टि डाली। यह मेरा दुर्भाग्य समझिए कि मुझे आज तक कोई भी ऐसा मित्र नहीं मिला जिसने मुझे कुछ लाभ पहुँचाया हो। बहुत-से मित्र तो अपना काम निकालने के बाद फिर कभी दिखाई भी न दिए। कई बार कई मित्रों के हाथों लज्जित भी होना पड़ा। ऐसे भी मित्र मिले जिनके होते हुए किसी शत्रु की आवश्यकता अनुभव नहीं होती। इस प्रकार के मित्रों को पुस्तक समर्पित कर देने से यही अच्छा है कि इसे किसी कुएँ को अर्पित कर दिया जाए।

अच्छा फिर किसको समर्पण किया जाए? एक के बाद कई विचार आए और चल दिए। कोई बात स्थायी रूप से सामने आते हुए दिखाई न दी। 'मधुशाला की'? कौन-सी मधुशाला की, जहाँ कवियों को उधार मिलता है। नहीं, नहीं, जहाँ मधुबाला को देखकर मनुष्य आत्म-विभोर हो झूम उठता है। अरे क्या धरा है इन मधुबालाओं में और मधुशालाओं में! कितने कवि, लेखक, नाटककार, बड़े-बड़े गंभीर तत्ववेत्ता और विद्वान जितनी संख्या में शराब के प्याले में डूब कर मरे हैं, उससे कहीं कम व्यक्ति इस संसार में समुद्र में डूब कर मरे हैं।

अपनी लेखनी को? बात तो ठीक है यदि लेखनी न होती तो हमें कोई जानता भी नहीं। यह पुस्तक ही न लिखी जाती। परंतु यदि इस समस्या पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाए तो हम इसी परिणाम पर पहुँचते हैं कि अभी हमारी लेखनी का बहुत अधिक मूल्य नहीं आँका जा सकता।

अच्छा तो फिर हम यह पुस्तक खादी भंडार को समर्पित कर दें। इस बात का भी काफी महत्व है। हमारा प्रेम 'खादी भंडार' के साथ ऐसा ही है जैसा कि प्रायः कवियों

का मधुशाला से होता है। लेकिन यदि थोड़ा और गंभीरता से सोचा जाए तो समर्पण का वास्तविक अधिकारी तो चरखा है, जोकि 'खादी भंडार' की आत्मा है। यदि चरखे का अस्तित्व न होता तो 'खादी भंडार' कहीं भी दिखाई न देता। इसलिए अच्छा यही है कि समर्पण की यह प्रतिष्ठा 'चरखे' को ही दी जाए। परंतु साथ ही यह भी विचार आता है कि यदि 'कपास' न होती तो चरखा महाशय वैसे ही बेकार रह जाते। कपास का जीवन उद्‌गम 'बिनौलों' के साथ है। तब क्या बिनौला महोदय को यह सत्कार प्रदान किया जाए? वाह यार, यदि बिनौलों की पूजा आरंभ हो गई तो फिर हम किस खेत की मूली हुए?

आज का युग लोकतंत्र का युग है। इस युग में वही व्यक्ति आगे बढ़ सकता है जिस पर मतदाता प्रसन्न हों। परंतु इसके बारे में ठीक ही कहा गया है कि वोटर और मोटर का कुछ पता नहीं। किस समय किस ओर चल पड़े? यह भी कुछ पता नहीं कि कब और किन परिस्थितियों में बिगड़ खड़े हों। हमारा जीवन भी एक निरंतर यात्रा है, अतः हमें यात्रा में सहायक होने वाली मोटर और गाड़ियों को पूरा सत्कार देना चाहिए। परंतु साथ ही यह भी बात है कि इस स्पुतनिक और अणु युग में मोटर और गाड़ियाँ बहुत पीछे रह गई हैं। स्पुतनिक की याद आते ही मुझे लायिका की याद आ गई। लायिका, वही कुतिया जिसे सबसे पहले चंद्रलोक के मार्ग पर आगे बढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। लायिका की याद आते ही मुझे तुरंत यह भी ध्यान आ गया कि क्यों न यह पुस्तक 'प्यारी लायिका' को समर्पित कर दी जाए। लायिका के पुजारी होने से हम प्रगतिशील लेखक भी बन जाएँगे और हमारी पुस्तक के अनुवाद भी कई भाषाओं में हो जाएँगे।

मेरी आँखों के समक्ष कुछ समय तक अपनी पूँछ हिलाती हुई लायिका फिरती रही, परंतु शीघ्र ही मेरे मस्तिष्क में चिड़ियाघर के वे बंदर घुस आए जोकि एक बार मेरे हाथ से खाने की कुछ चीजें छीनकर भाग गए थे। निस्संदेह बंदर बहुत ही शरारती जानवर हैं, परंतु कुतिया से तो आदमी के ज्यादा निकट हैं। इसके साथ ही यह भी एक ऐतिहासिक सत्य है कि हमारे देश में बंदरों ने एक बार बड़ी प्रतिष्ठा का युद्ध किया था। विजय प्राप्त करने में मर्यादा पुरुषोत्तम राम का उन्होंने पूरा साथ दिया था। क्या हुआ आज लायिका प्रथम नंबर ले आई, परंतु वानर भी तो वानर ही हैं। और यदि वानर नहीं तो किसी वानर की आकृति वाले मानव को यह आदर दिया जाना चाहिए।

वानर की आकृति वाले मानव भी बहुत अच्छे वर्ग के लोग नहीं कहे जा सकते। मानव आकृति में और भी अनगिनत प्रकार के मनोरंजक वर्ग हैं। गंजे, हक्ले, दाढ़ी वाले, बिना दाढ़ी वाले, शरारती, घाघ, चुगलखोर, कर्ज लेकर वापस न देने वाले, एक-दूसरे को लड़वा देने वाले आदि विभिन्न प्रकार के विभिन्न रंगों के लोग इस संसार में हैं। ये सब भी अपना अधिकार पुस्तक पर रखते हैं।

इनको समर्पित करने से तो कहीं अच्छा है कि अपने नाटकों के किसी पात्र को ही यह सम्मान दिया जाए। परंतु हमारे इन पात्रों के बारे में भी एक कठिनाई है कि सबका कोई न कोई स्क्रू ढीला है। वैसे भी यदि ऐसा न होता तो हमारे साथ उनके मेल की कोई संभावना ही न थी। इसलिए वह बात भी नहीं बनी। इसके बाद भी मस्तिष्क में कई महान व्यक्तियों के नाम आए जो जनसाधारण की सेवा में लगे हुए हैं। साधारण से साधारण और महान से महान व्यक्ति का नाम कल्पना में आता गया और निकलता गया। परंतु कोई बात जंची नहीं। अंत में मैं थककर बैठ गया। एकाएक मेरी दृष्टि अपने सेहन में लगे फूलों पर चली गई। मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे सुकुमार डालियाँ अपने मुँह से बोल रही हों। मैं झूम उठा और शीघ्रता से उठा और लेखनी उठाकर बड़ी तन्मयता से मैंने लिख दिया –

''देश की धरती के पवित्र कणों को।''

❑

गौतम दास गुप्ता
अनु. डॉ. देवेंद्र देवेश

हवन की अग्नि

उत्तरी हवाओं के संग मीलों दूर से
चला आ रहा कारवाँ
सूअर के मांस, टोकरी भर अंडे
और निजी तिरपाल लिए
अजगर की भाँति सर्पिल
नजर आ रहा है यह रंगीन संसार
दुर्गम राहों को पार कर,
बर्फानी हवाओं को झेलकर
गौशकट के पर्दे हटाकर पान के पत्तों-से मुख
मानों सीमेंट से गढ़े सख्त वक्ष ढूँढ़ते हैं।
दादी माँ की झोली में मानों
सात सौ वर्ष दृश्यमान हो उठे हैं
मरु प्रदेशों के ताप और
घने जंगलों की छाया से गुजरकर
उजड़ा नगर, सौंधी मिट्टी और टूटे रथ छोड़कर
उनकी आँखों में विश्राम का कोई चिह्न नहीं
और तलवार है जंगरहित
उसकी पहचान मैं आज सामगानों और
हवन की अग्नि में ढूँढ़ता हूँ।

❑

A.J. Thomas

Body-Mind

"The body is a baby;
the mind has to take tender care of it,"
you said.
"Treat it kindly,
caress and cuddle it close."

Yes, dear;
the mind is ageless, rugged, wild, horrid
spewing nightmares
preparing delusive quagmires
pulling and pushing the body
here and there
like an adult conducting a child
in a jostling, pressing crowd at a fair;
at times it preys upon the body like
a vulture;
finally, when the body can't take it any longer
or, when the mind finds it profitable no longer
to reside in the body
it walks off
and the poor body is left
to go back to the elements and start all over again
until, the sullen, sulking mind will deign
to return to it again;
some mind.

❑

ए.जे. थॉमस
अनु. अनीता पंडित

शरीर-मन

''शरीर एक शिशु है
मन को इसका ख़ास ख्याल रखना होगा।''
तुमने कहा,
''इसके साथ सदय व्यवहार रखो,
लाड़-प्यार और आलिंगन करो।''

हाँ प्रिय,
मन चिर-युवा है, अनगढ़, जंगली, वीभत्स
उगलता हुआ दुःस्वप्न
तैयार करता हुआ
मोहक दलदल
शरीर को इधर-उधर खींचता-धकेलता
जैसे एक वयस्क किसी बच्चे को
मेले की धक्कम-धक्के भरी भीड़ में
करता है नियंत्रित,
कभी-कभी किसी गिद्ध की तरह
दबोचता है यह शरीर को।

अंततः जब शरीर
इसे और अधिक सहन नहीं कर पाता

अथवा, जब मन शरीर में रहना
और अधिक लाभकारी नहीं पाता
यह बहिर्गमन करता है
और क्षुद्र शरीर बचा रह जाता है
तत्व-लीन होने और सब कुछ दुबारा शुरू करने को
जब तक कि नाराज, रूठा मन
इसमें दुबारा लौटने की कृपा नहीं करता
क्या मन?

❑

रघुवीर शर्मा

गीतांजलि के हिंदी अनुवादों का गंभीर अध्ययन*

रवींद्रनाथ ठाकुर के 150वीं जयंती वर्ष एवं गीतांजलि के प्रकाशन की शतवार्षिकी के अवसर पर प्रकाशित डॉ. देवेंद्र कुमार 'देवेश' की शोध-आलोचनात्मक पुस्तक 'गीतांजलि के हिंदी अनुवाद' डॉ. कामेश्वर पंकज (प्राध्यापक, हिंदी विभाग, के.बी. झा महाविद्यालय, कटिहार, बिहार) के निर्देशन में भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार के अंतर्गत पीएच.डी. उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध का संशोधित रूप है। हिंदी में किसी एक कृति के समस्त हिंदी अनुवादों की एक साथ तुलनात्मक अध्ययन का यह संभवतः पहला प्रयास है और इसके कारण भी बिलकुल स्पष्ट हैं। 'गीतांजलि' के जितने अनुवाद हिंदी में हुए हैं, उतने किसी भी और कृति के अब तक नहीं हुए हैं। प्रस्तुत अध्ययन में ही कुल 38 हिंदी अनुवादों और दस देवनागरी लिप्यंतरणों की सूची प्रस्तुत की गई है। इन 38 अनुवादों में से 13 गद्यानुवाद हैं और 25 पद्यानुवाद। देवनागरी लिप्यंतरण मूल बांग्ला से किए गए हैं। चूँकि मूल बांग्ला 'गीतांजलि' एक पद्य कृति है, इसलिए स्वाभाविक है कि ये लिप्यंतरण भी पद्य में ही हुए हैं।

सामान्य पाठकों में इस भ्रम की पूरी गुंजाइश है कि रवींद्रनाथ ठाकुर की जिस कृति को नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ, वह उनकी बांग्ला कृति का अविकल अंग्रेजी अनुवाद है। लेकिन वास्तविकता यह है कि अंग्रेजी 'गीतांजलि' में जो 103 रचनाएँ हैं, उनमें से केवल 53 रचनाएँ ही ऐसी हैं, जो रवींद्रनाथ ठकुर ने अपनी बांग्ला 'गीतांजलि' से ली हैं। इसी प्रकार मूल बांग्ला के विपरीत अंग्रेजी 'गीतांजलि' न केवल गद्य में है, बल्कि संप्रेषण के स्तर पर भी कवि ने मूल शब्द प्रयोगों के बंधन से स्वयं को स्वतंत्र रखा है और केंद्रीय भाव मात्र की रक्षा करते हुए उसकी सर्वथा मौलिक सर्जना कर

* गीतांजलि के हिंदी अनुवाद (शोध-आलोचना), लेखक : देवेंद्र कुमार देवेश, प्रकाशक : विजया बुक्स, 1/10753, सुभाष पार्क, गली नं. 3, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32, पृष्ठ 220, मूल्य : 295/रुपए, प्रथम संस्करण : 2011

डाली है। यही कारण है कि बांग्ला 'गीतांजलि' के अंग्रेजी भावांतरण 'सांग ऑफरिंगस' को मौलिक कृति मानते हुए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

'गीतांजलि' को लेकर एक यह भी भ्रम फैला कि इसका अंग्रेजी अनुवाद अंग्रेजी के महान कवि डब्ल्यू.बी. येट्स ने किया है। यह भ्रम हिंदी जगत में प्रख्यात हिंदी कवि-आलोचक मुक्तिबोध से लेकर प्रतिष्ठित कथाकार अमृततलाल नागर तक को था। जबकि वास्तविकता यह है कि अंग्रेजी 'गीतांजलि' के पाठ पर रवींद्रनाथ ठाकुर से विचार-विमर्श के दौरान और उसकी भूमिका लिखने के क्रम में येट्स ने रवींद्रनाथ को अनेक सुझाव-संशोधन सुझाए और रवींद्रनाथ ठाकुर ने अनुवाद को बेहतर बनाने के लिए उनके द्वारा संशोधनों-सुझावों को गंभीरता से लिया और अपने विवेकानुसार अनेक संशोधनों को स्वीकार भी किया।

सच तो यह है कि यदि अंग्रेजी 'गीतांजलि' पर यह पंक्ति – Collection of prose translations made by the author from the original Bengali. (मूल बांग्ला से लेखक द्वारा किए गए गद्यानुवादों का संग्रह) अंकित न होती, तो शायद ही 'एक अनूदित कृति के रूप' में इसकी उतनी चर्चा होती, जितनी अभी हो रही है। आलोचकों-समीक्षकों ने तो हरिवंश राय बच्चन की 'मधुशाला' तक को उमर खैयाम की रूबाइयों का अनुवाद बता दिया तो क्या इससे बच्चन जी की 'मधुशाला' का प्रभाव कम हो गया? अनुवाद को लेकर इसी लाइन पर सोचा जाए तो तुलसीदास का 'रामचरितमानस' वाल्मीकि कृत 'रामायण' का अनुवाद ही तो है।

स्वयं रवींद्रनाथ ठाकुर अनुवाद को मूल रचना के प्रति अन्याय मानते हैं, जिसकी पुष्टि उनके उस पत्र की इन पंक्तियों से होती है, जो उन्होंने अनुवाद कार्य को लेकर 6 जनवरी, 1935 ई. को अमिय चक्रवर्ती को लिखा है – ''साहित्य का प्राण-रक्त भाषा की शिराओं से होकर बहता है और यदि आप उसे भिन्न शिराओं में बहाना चाहेंगे तो मूल सृजनात्मक कृति की जीवन-धड़कन रुक जाएगी। इस तरह के अनूदित साहित्य में विषय-वस्तु अपनी जीवंतता खो देती है और निष्प्राण रह जाती है। हाल ही में अपने अनुवादों का पुनरीक्षण करते हुए यह विचार बार-बार मेरे मन में उभरता रहा। आप जानते हैं कि जब बछड़े की मृत्यु के बाद गाय दूध देना बंद कर देती है, तब पुआल से बछड़े की खाल को भरकर नकली बछड़ा तैयार किया जाता है, ताकि उसे देखकर और उसकी गंध पाकर दूध टपकने लगे। इसी प्रकार अनुवाद भी एक मृत बछड़े का रूपाकार है, जो ठगता है, मनोहर नहीं होता।'' (टैगोर ऑन ट्रांसलेशन, द विश्वभारती क्वार्टरली, अंक 1-2 खंड 43, मई-अक्टूबर 1977, पृष्ठ 70)

समीक्ष्य पुस्तक के लेखक डॉ. देवेश ने अनुवाद सिद्धांत चिंतन भी किया है। उन्होंने विशेष तौर पर काव्यानुवाद की समस्याओं पर गहन चिंतन-विवेचन किया है। इसे रेखांकित

करते हुए पुस्तक की भूमिका में तुलनात्मक साहित्य के प्रतिष्ठित विद्वान डॉ. इंद्रनाथ चौधुरी कहते हैं, ''अनुवाद संबंधी रवींद्रनाथ ठाकुर के विचारों को हिंदी में अन्यत्र भी उद्धृत किया जाता है, लेकिन इस पुस्तक में पहली बार उनके विचारों की सम्यक् प्रस्तुति करते हुए यह उद्घाटित किया गया है कि अनुवाद के पक्षधर नहीं होते हुए भी उन्होंने स्वयं अपनी रचनाओं के अनुवाद का निर्णय क्यों लिया। 'गीतांजलि' के हिंदी अनुवाद की समस्याओं पर विमर्श के बहाने देवेश ने अपनी पुस्तक में बांग्ला और अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद, विशेषकर काव्यानुवाद की समस्याओं का गहराई से विवेचन किया है।''

वास्तव में अनुवाद कर्म ही अपने में एक जटिल कार्य है, लेकिन कविता का अनुवाद तो दुधारी तलवार पर चलने से कम नहीं है। हेनरिक इब्सन ने 1872 में अपने एक पत्र में लिखा था, ''मेरा विश्वास है कि किसी कविता का अनुवाद उसी प्रकार किया जाना चाहिए, जिस प्रकार कवि ने स्वयं उसकी रचना की होती, यदि वह उस देश का होता, जिसके लिए उसकी कविताओं का अनुवाद किया जा रहा है।'' (ऑक्सफोर्ड कंसाइस डिक्शनरी ऑव लिटरेरी कोटेशंस, सं. पीटर केंप, पृष्ठ 308)

रवींद्रनाथ ठाकुर ने भी यह स्वीकार किया है कि अंग्रेजी में उनके द्वारा प्रस्तुत गीतों में उन्होंने प्रकारांतर से पुनर्सर्जना ही की है – ''मेरी कठिनाई यही है कि मैं अनुवाद नहीं कर पाता, मुझे प्रायः नया बनाकर लिखना पड़ता है। कारण यह है कि अच्छी तरह अनुवाद करते समय स्वयं को भुलाए बिना लिखना संभव नहीं। अपने को न भूलने से मैं बात भूल जाता हूँ, व्याकरण भूल जाता हूँ और शैली भूल जाता हूँ।'' (रामानंद चट्टोपाध्याय को लिखा 28 अक्टूबर 1917 का पत्र, 'कालपत्र', अनुवाद एवं सं. डॉ. रणजीत साहा, 2004, पृष्ठ 62)

'गीतांजलि' के अंग्रेजी और बांग्ला पाठों का तुलनात्मक विमर्श भी इस दृष्टि से रोचक है। शिल्प की दृष्टि से विचार करें तो यह बात पहले भी कही जा चुकी है कि बांग्ला 'गीतांजलि' एक पद्यबद्ध रचना है, जबकि अंग्रेजी 'गीतांजलि' में कवि ने गद्य की स्वतंत्रता ली है। लेकिन बात यहीं समाप्त नहीं होती। अंग्रेजी 'गीतांजलि' में अनेक कविताओं के अनुवाद संक्षिप्त हो गए हैं। बांग्ला 'गीतांजलि' के कम से कम आठ गीत ऐसे हैं, जो अंग्रेजी 'गीतांजलि' में मूल की अपेक्षा लघु काया में प्रस्तुत किए गए हैं। उन्हें एक नवीन सर्जना की कोटि में रखा जा सकता है। कुछेक गीतों में बांग्ला 'गीतांजलि' की तुलना में अतिरिक्त शब्द अथवा वाक्य प्रयोग के द्वारा मूल भाव को विस्तार अथवा व्याख्या भी मिलती है। इसी प्रकार कुछेक गीतों में मूल गीतों की अनेक पंक्तियों का अनुवाद ही नहीं किया गया है। यहाँ तक कि अंग्रेजी 'गीतांजलि' में हमें ऐसे गीत भी प्राप्त होते हैं, जिनमें मूल भावाभिव्यक्ति से विचलन दिखाई देता

है। डॉ. देवेश ने अपनी पुस्तक में अध्यवसायपूर्वक ऊपर गिनाए गए अनुवादों के प्रकारों के नमूने जुटाकर 'गीतांजलि' के बांग्ला पाठ और अंग्रेजी पाठ का सम्यक् विश्लेषण किया है। अपनी पैनी नजर एवं विश्लेषण दृष्टि से लेखक ने अनुवाद विषयक जो विश्लेषण किया है, वह अनुवाद अध्ययन में रुचि रखने वालों के लिए एक सौगात है। 'गीतांजलि' को लेकर जितने भी आयाम हो सकते हैं, उन सब पर डॉ. देवेश की दृष्टि गई है और इसीलिए इस पुस्तक में कवि कृत बांग्ला और अंग्रेजी पाठों पर तुलनात्मक विमर्श से शुरुआत करके इन पाठों के आधार पर किए गए 'गीतांजलि' के हिंदी अनुवादों को तीन श्रेणियों – लिप्यंतरण, गद्यानुवाद और पद्यानुवाद में बाँटकर उनका तुलनात्मक विवेचन किया गया है।

डॉ. देवेश ने 'गीतांजलि' के हिंदी गद्यानुवादों को भी तीन श्रेणियों में बाँटा है – मूलनिष्ठ अंग्रेजी गद्याधारित अनुवाद, मूल बांग्ला पाठ पर आधारित भावानुवाद; तथा व्याख्यानुवाद। फिर मूल अंग्रेजी एवं बांग्ला पाठों के साथ किए गए गद्यानुवादों के उदाहरण एक साथ रखते हुए उन पर तुलनात्मक रूप से विचार किया है। इसी प्रकार 18 पद्यानुवादों के उदाहरण भी मूल बांग्ला एवं अंग्रेजी पाठ के साथ प्रस्तुत कर शब्द प्रयोग, भाव निर्वाह, शिल्प और शैली के आधार पर विश्लेषित किए गए हैं। डॉ. रणजीत साहा के साक्ष्य से, ''प्रस्तुत तुलनात्मक अध्ययन प्रसिद्ध अनुवादविद् न्यूमार्क द्वारा प्रतिपादित अनुवाद समीक्षा के पाँच चरणों – स्रोत भाषा पाठ का विश्लेषण, अनुवादक का उद्देश्य, मूल के साथ अनुवाद की तुलना, अनुवाद का मूल्यांकन तथ अनुवाद की स्वीकार्यता – के आधार पर किया गया है। इस क्रम में श्रेष्ठ अनुवाद की पहचान के लिए मूलनिष्ठता, पठनीयता, बोधगम्यता और प्रयोजन-सिद्धि के मानदंड अपनाए गए हैं।'' (अनुवाद : अनुश्रुतियाँ, गीतांजलि के हिंदी अनुवाद, पृष्ठ 10)

प्रायः दुनिया की सभी भाषाओं के अनुवाद, आलोचना और संपादन को मुख्य धारा के साहित्यिक कार्य से अलग करके साहित्य के आनुषंगिक कार्यों के रूप में ही देखा जाता है। अपनी हिंदी भाषा भी इसका अपवाद नहीं है। डॉ. देवेश स्वयं एक संपादक, अनुवादक एवं आलोचक हैं और इस तथ्य को उनसे बेहतर कौन समझ सकता है। तभी तो यह विडंबना सामने आती है कि उन्होंने जब 'गीतांजलि' के हिंदी अनुवादकों के परिचय को भी पुस्तक में शामिल करने की सोची, तो तमाम प्रयत्नों के बावजूद उन्हें 'गीतांजलि' के प्रथम हिंदी अनुवादक काशीनाथ का जीवन-परिचय उपलब्ध नहीं हो पाया।

वैसे यहाँ यह सुखद है कि इस पुस्तक में 'गीतांजलि' के अन्य अनुवादकों को यथोचित्त सम्मान देते हुए उनके जीवन परिचय को परिशिष्ट में स्थान दिया गया है।

इसके अंतर्गत सर्वश्री काका कालेलकर, कैलाश 'कल्पित', गिरिधर शर्मा 'नवरत्न', डोमन साहु 'समीर', सरिता, प्रतिभा मिश्र, प्रयाग शुक्ल, पृथ्वीनाथ शास्त्री, बैजनाथ प्रसाद शुक्ल 'भव्य', भवानी प्रसाद तिवारी, मुरलीधर श्रीवास्तव 'शेखर', रणजीत साहा, राका डे, रामावतार ड्रोलिया, रूपनारायण पांडेय, व्यंकटराव यादव, सत्यकाम विद्यालंकार, सुधींद्र तथा हंस कुमार तिवारी – कुल 19 अनुवादकों के परिचय शामिल किए गए हैं। इसके साथ-साथ उन्होंने यह वायदा भी किया है कि पुस्तक के आगामी संस्करणों में शेष अनुवादकों का भी परिचय उपलब्ध कराने का निश्चित प्रयास किया जाएगा।

समीक्षित पुस्तक की एक अन्य विशेषता की चर्चा भी यहाँ समीचीन है। जिसे हम 'प्रोडक्शन क्वालिटी' कहते हैं, उस दृष्टि से भी देखें तो पुस्तक में प्रूफ की गलतियाँ लगभग नहीं हैं। कागज की गुणवत्ता संतोषजनक है और छपाई भी अच्छी है। पुस्तक की पृष्ठ संख्या और मूल्य का अनुपात भी ठीक है। यह पुस्तक हमें बताती है कि हिंदी के प्रकाशकों को सरकारी खरीद के चक्कर में अनाप-शनाप मूल्य रख देने की प्रवृत्ति से बचना चाहिए।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि एक ऐसी काव्यकृति, जो स्वयं अपने रचयिता द्वारा बांग्ला और अंग्रेजी दो-दो भाषाओं में ही नहीं, बल्कि दो अलग-अलग भाषा-शैलियों – पहले पद्य और बाद में गद्य – में रची गई हैं, जिसके प्रथम अनुवाद के 1915 में प्रकाशन के बाद से आज तक पद्य और गद्य दोनों विधाओं में निरंतर अनुवाद हो रहे हैं, पर ऐसे ही एक सम्यक्-गंभीर शोध की आवश्यकता थी, जिसकी पूर्ति डॉ. देवेंद्र कुमार 'देवेश' की यह पुस्तक करती है।

❑

विधि भारती परिषद के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

1. **'अनुवाद के नए परिप्रेक्ष्य',** संतोष खन्ना, विधि भारती परिषद, 2008, मूल्य : 500/- रुपए।
2. **'संग्राम शेष है' (कहानी-संग्रह),** डॉ. उषा देव, 2009, मूल्य : 250/- रुपए।
3. **'21वीं शती में नारी : कानून और सरोकार',** विधि भारती परिषद, 2007, मूल्य : 350/- रुपए।
4. **'क्या मैं गलत थी?' (कहानी-संग्रह),** डॉ. उषा देव, 2008, मूल्य : 200/- रुपए।
5. **'क्या पाया? क्या खोया?' (कहानी-संग्रह),** डॉ. उषा देव, 2007, मूल्य : 200/- रुपए।
6. **'21वीं शती में मानव अधिकार : दशा और दिशा',** विधि भारती परिषद, मूल्य : 250/- रुपए।
7. **'भारत का संविधान : अनुचिंतन के नये क्षितिज',** विधि भारती परिषद, मूल्य : 250/- रुपए।
8. **'भारतीय कानूनों का समाजशास्त्र',** संतोष खन्ना, मूल्य : 500/- रुपए। (भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा पुरस्कृत।
9. **Dimensions of Environmental Law,** Ed. Santosh Khanna, Vidhi Bharati Parishad, Price : Rs. 400/–
10. **Reappraisal of the Constitution,** Ed. Santosh Khanna, Vidhi Bharati Parishad, Price : Rs. 350/-
11. **Human Rights Today,** Ed. Santosh Khanna, Vidhi Bharati Parishad, Price : 500/–
12. **The Consumer Protection Law and the Rights of Consumers,** Ed. Santosh Khanna, Vidhi Bharati Parishad, Price : Rs. 400/–
13. **'स्मृतियाँ' (कहानी संग्रह),** अख्तरुल हनीफ, विधि भारती परिषद, मूल्य : 100/- रुपए।
14. **'उपभोक्ता संरक्षण कानून और न्याय',** विधि भारती परिषद, मूल्य : 250/- रुपए।
15. **'साक्षी' (काव्य-संग्रह),** संतोष खन्ना, मूल्य : 60/- रुपए।
16. **'भावी कविता' (काव्य-संग्रह),** संतोष खन्ना, विधि भारती परिषद, मूल्य : 120/- रुपए।
17. **'संत जोन' (नाट्यानुवाद),** संतोष खन्ना, मूल्य : 245/- रुपए।
18. **पर्यावरण एवं पर्यावरण संरक्षण कानून,** सं. संतोष खन्ना, विधि भारती परिषद, मूल्य : 200/- रुपए।
19. **'तुम कहो तो!' (मौलिक नाटक),** संतोष खन्ना, मूल्य : 125/- रुपए।
20. **'कजरी' (कथा संग्रह),** डॉ. उषा देव, मूल्य : 175/- रुपए।
21. **'द्रौपदी ज़िंदा है' (कथा संग्रह),** डॉ. उषा देव, मूल्य : 150/- रुपए।
22. **'खुशी के पल' (कथा संग्रह),** डॉ. सरस्वती बाली, 2007 , मूल्य : 150/- रुपए। (हिंदी अकादमी द्वारा पुरस्कृत)
23. **सूचना का अधिकार अधिनियम : कार्यान्वयन और चुनौतियाँ,** सं. संतोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए।
24. **'अब की लड़का नहीं' (कहानी संग्रह),** डॉ. उषा देव, मूल्य : 250/- रुपए।
25. **'आज का दुर्वासा' (कहानी संग्रह),** संतोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए।
26. **'संधि-पत्र' (कहानी संग्रह),** डॉ. उषा देव, 2011 मूल्य : 300/- रुपए।
27. **'भारत की संसद और सामाजिक सरोकार',** सं. संतोष खन्ना, 2011, मूल्य : 150/- रुपए।

पुस्तकें मिलने का पता :

विधि भारती परिषद

बी.एच/48 (पूर्वी), शालीमार बाग, दिल्ली-110088

टेलीफोन : 011-27491549, मोबाइल : 9899651272, 08604614160

E-mail : vidhibharati@indiatimes.com